RNI No. 51966/1989
www.electroniki.com
जुलाई 2015
वर्ष 29
अंक 7

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार तथा सारस्वत सम्मान से सम्मानित

सलाहकार मण्डल
शरद चंद्र बेहार, डॉ. वि.दि. गर्दे, डॉ. संध्या चतुर्वेदी
डॉ. मनमोहन बाला, डॉ. ए.एस.झाड़गांवकर, प्रो. व्ही.के.वर्मा

संपादक
संतोष चौबे

प्रमुख उप–संपादक
विनीता चौबे
उप–संपादक
पुष्पा असिवाल
सह–संपादक
मनीष श्रीवास्तव, मोहन सगोरिया, रवीन्द्र जैन

संस्थागत सहयोग
अमिताभ सक्सेना, शैलेष पांडेय, डॉ. राघव, विजय सिंह,
डॉ. अनुराग सीठा, डॉ. सत्येन्द्र खरे, संतोष शुक्ला
राज्य प्रसार समन्वयक
शशिकांत वर्मा, लातूर सिंह वर्मा, नरेन्द्र एस. मलिक, वैभव गुप्ता,
अदिति चतुर्वेदी, शलभ नेपालिया, असीम कटियार, अंबरीष कुमार,
हरीश कुमार पहारे
क्षेत्रीय प्रसार समन्वयक
निशांत श्रीवास्तव, राजीव चौबे, जितेन्द्र पांडे, लुकमान मसूद,
आर.के. भारद्वाज, संजीव गुप्ता, रवि चतुर्वेदी, प्रवीण तिवारी,
अरुण साहू, अभिषेक अवस्थी, विजय श्रीवास्तव, के.आई. जावेद,
परमानंद कुमार पासवान, असीम सरकार, अमृतेष कुमार, योगेश मिश्रा,
आशीष कुमार दास, संतोष कुमार पाढ़ी, दर्शन व्यास, भूपिन्दर चौधरी,
आबिद हुसैन भट्ट, दलजीत सिंह, राजन सोनी, अजीत चतुर्वेदी,
लियाकत अली खोकर, अनिल कुमार, अमिताभ गांगुली

समन्वयक प्रचार एवं विज्ञापन
राजेश पंडा
आवरण
वंदना श्रीवास्तव, अमित सोनी, मुकेश सेन

आज के
विकसित अथवा तेज
विकास दर वाले
विकासशील देशों में जो
परिवर्तन हुए हैं, वे जीवन
और प्रकृति की वैज्ञानिक
तथा तार्किक दृष्टि को
स्वीकार करने के कारण ही
हुए हैं।

– प्रशांतचंद्र महालनोबीस

इस अंक में...

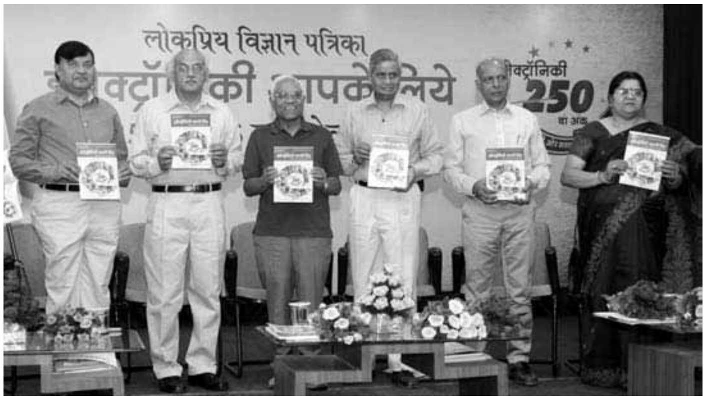

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' 250वां अंक विमोचन समारोह /00

भूकंप : इस मातम को कैसे नापें? ●विजन कुमार पांडे /00

म्यू-न्यूट्रिनो की खोज से मिली नई दिशा ●डॉ.के.एम.जैन /00

रोबोट शब्द के जनक ●डॉ.अरविन्द दुबे /00

हब्बल अंतरिक्ष दूरबीन के 25 वर्ष ●डॉ.के.एम.जैन /00

सिलिकोसिस : धूल कणों से फैलता रोग ●सचिन नरवड़िया /00

एलियंस को भेजेंगे संदेश ●मुकुल व्यास /00

ऐतिहासिक

शल्य चिकित्सा के जनक धन्वंतरि ●शुकदेव प्रसाद /00

विज्ञान वार्ता

विज्ञान कथाएं सदैव तार्किक होती हैं ●देवेन्द्र मेवाड़ी से मनीष मोहन गोरे की बातचीत /00

विज्ञान कथा

भविष्य ●देवेन्द्र मेवाड़ी/00

कॅरियर

ऑटोमोबाइल्स ●संजय गोस्वामी/00

स्थाई स्तम्भ /00

गतिविधियां /00

पत्र व्यवहार का पता

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

सेक्ट, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, भोपाल–47

फोन : 0755-2499657, 6546511, फैक्स : 0755-2429096

e-mail :electroniki@electroniki.com, website : www.electroniki.com वार्षिक शुल्क : 330/- प्रति अंक : 30/-

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के हैं। उनसे संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है।

सभी विवादों का निबटारा भोपाल अदालत में किया जायेगा।

स्वामी, संतोष कुमार चौबे, प्रकाशक व मुद्रक संतोष चौबे के लिए दृष्टि ऑफसेट, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित व स्कोप कैम्पस एन.एच.-12 होशंगाबाद रोड, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित, संपादक संतोष चौबे

पत्र-प्रतिक्रिया

पत्र-प्रतिक्रिया

पाठकीय

मैं इससे पहले भी पत्रिका के कई कार्यक्रमों में शामिल हो चुका हूँ। मुझे बेहद खुशी है कि पत्रिका ने उत्तरोत्तर प्रकाशित होते हुए 250वें अंक के आयाम को छुआ है। मेरा सुझाव है पत्रिका के माध्यम से अधिक से अधिक युवा साथियों को जोड़ा जाए जिससे विज्ञान प्रचार-प्रसार में हमें बहुत सहायता मिलेगी।

– अनुज सिन्हा, नई दिल्ली

आपने अपने 250 वें अंक के लोकार्पण उत्सव में मुझे आमंत्रित किया, इसके लिए अत्यंत आभार। आपके और प्रतिभागियों के साथ विचार-विमर्श का मौका मिला, इसे मैं अपना सौभाग्य समझता हूं। आप लोगों के आतिथ्य के लिए भी विनम्रतापूर्वक आभार व्यक्त करना चाहता हूं। मैं 'इलेक्ट्रानिकी आपके लिए' को अपना हर संभव योगदान देने की कोशिश करूंगा। पत्रिका की पूरी टीम को इस सफल आयोजन के लिए हार्दिक बधाई और इसके उज्ज्वल भविष्य के लिए असीम शुभकामनाएं।

– देवेंद्र मेवाड़ी, नई दिल्ली

सोलह मई 2015 के दिन आपकी प्रतिष्ठित और लोकोपयोगी विज्ञान पत्रिका 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' के 250वें अंक के लोकार्पण समारोह में मुझे आईसेक्ट विश्वविद्यालय एवं पत्रिका परिवार के सभी सदस्यों से जो स्नेह और सत्कार मिला, उसके लिए मैं तहे-दिल से आभारी हूँ और अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। इस अवसर पर मुझे प्रत्यक्ष रूप से यह अनुभव हुआ है कि कैसे पत्रिका से जुड़े सभी महानुभावों ने आपके नेतृत्व में इस दुष्कर कार्य को सफलता के उस मुकाम तक पहुँचाया है जिसे देखकर एक विज्ञान लेखक होने के नाते मैं स्वयं भी गौरवान्वित महसूस कर रहा हूँ। यूं मुझे विगत चालीस वर्षों में राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी विज्ञान लेखन से जुड़े अनेक समारोहों में शामिल होने के मौके मिलते रहे हैं लेकिन जिस सहजता और सरलता से आपके मार्गदर्शन में यह समारोह संपन्न हुआ और जिस आत्मीयता से आप और विनीता चौबे जी सभी लोगों से मिलते रहे, उससे मुझे यह कहने में खुशी हो रही है कि आप राष्ट्र निर्माण से जुड़े लोगों के लिए एक अनुपम प्रेरक और प्रेरणा स्रोत हैं। आप सहित पत्रिका परिवार के सभी सदस्यों को हार्दिक शुभकामनाएं।

– सुभाष चंद्र लखेड़ा, नई दिल्ली

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' के 250वें अंक के लोकार्पण समारोह में मैं स्वयं उपस्थित न हो सका, इसका खेद है। मैंने विज्ञान परिषद् की ओर से देवव्रत द्विवेदी को भेजा था। वे आपके द्वारा भेंट किया गया साहित्य ले आये हैं। इलेक्ट्रॉनिकी का 250वां अंक अत्यन्त भव्य है। आकर्षक आवरण पृष्ठ के अलावा इसमें संकलित लेख अत्यन्त रोचक एवं सूचनाप्रद है। आपकी गतिविधियों का भी परिचय इसी अंक को पढ़ने पर मिला। आप एक महान कार्य कर रहे हैं। विशेषकर पुस्तक प्रकाशन योजना अत्यन्त सराहनीय है। इस बार विज्ञान परिषद् से जुड़े 8 लेखकों ने पुस्तक लेखन में भाग लिया है। अब तो हमारा मन ललचा रहा है कि विज्ञान परिषद् में आपको आमंत्रित करके हम 'विज्ञान' के दूसरे शताब्दी के रूप रंग पर परामर्श करें। हमें विश्वास है कि आप उत्तरप्रदेश की इस प्राचीन विज्ञान संस्था में अवश्य पधारेंगे।

– डॉ. शिव गोपाल मिश्र, इलाहाबाद

'इलेक्ट्रानिकी आपके लिए' आरम्भ में एक पत्रिका थी परन्तु वर्तमान में यह विज्ञान लेखकों की प्रेरणा स्रोत बन गई है। मेरी नजर में ऐसी कोई पत्रिका नहीं, जो अपने लेखकों को इतना महत्व देती हो और उन्हें

ससम्मान आमंत्रित कर उनकी उपस्थिति में पत्रिका के सफर के पड़ावों का उत्सव मनाती हो। लेखक और पत्रिका के बीच के रिश्ते यहाँ एक नया आयाम प्राप्त कर रहे हैं और हम सभी लेखक इसके साक्षी हैं। इसके लिए 'इलेक्ट्रानिकी आपके लिए' परिवार और विशेष तौर पर इसकी सम्पादकीय टीम बधाई की पात्र हैं। बिना किसी सरकारी अनुदान के एक हिंदी विज्ञान पत्रिका 28 वर्षों से लगातार प्रकाशित हो रही हो और इसके 250वां अंक का लोकार्पण होना भारतीय विज्ञान संचार की एक ऐतिहासिक घटना है।

– मनीष मोहन गोरे, नई दिल्ली

संसार में कुछ लोग ऐसे होते हैं जो हर दिन को खुशी का दिन मनाकर व्यतीत करते हैं और दूसरों को भी अभिप्रेरित करते हैं। वस्तुतः ऐसी रचनात्मक सोच भी प्रारब्ध एवं पुरुषार्थ से ही प्राप्त होती है जिससे अंततोगत्वा धनात्मक ऊर्जा का संचार होता है। ऐसा ही व्यक्तिव आदरणीय श्रीयुत संतोष चौबे का है। आपने कठिन परिश्रम से जो आईसेक्ट तथा स्कोप का स्वप्न सोचा था तथा इनके बीजों को शुभ घड़ी में बोया था वो आज फल देकर जनमानस को रसास्वादित कर उनके ज्ञान में अभिवृद्धि कर रहे हैं। 'इलेक्ट्रॉनिक आपके लिए' बहुआयामी विज्ञान पत्रिका के सफल प्रकाशन के 50वें, 100वें, 150वें, 200वें अंकों के प्रकाशन को आपने उत्सव का रूप दिया तथा अभी 250वें अंक के सुप्रकाशन के विमोचन का भव्य आयोजन अपने आप में महत्वपूर्ण था। बावजूद प्रचंड गरमी के देश के कोने-कोने से पधारे विज्ञान संचारकों की उपस्थिति मात्र आपके आत्मीय प्रेम तथा आतिथ्य सत्कार का ही द्योतक थी। वस्तुतः पूरे देश में ऐसी कोई पत्रिका नहीं है जिसने प्रकाशित अंकों के इतने सुव्यवस्थित आयोजन किए हैं। मैं आपके अहर्निश सुप्रयासों को हृदय से शुभकामना देता हूँ। साथ ही पत्रिका के आगामी सूचनाप्रद, लोकोपयोगी विषयों पर पाठकोपयोगी प्रकाशन की सुआशा करता हूँ। प्रसंगवश आपके सफल प्रेरणास्पद जीवन के साठवें वर्ष के उपलक्ष्य में ईश्वर से आपके सुदीर्घ स्वस्थ, यशस्वी एवं मंगलमय जीवन की प्रार्थना करता हूँ।

– डॉ. दुर्गादत्त ओझा, जोधपुर

लोकप्रिय विज्ञान पत्रिका 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' के 250वें अंक के लोकार्पण के उपलक्ष्य में आईसेक्ट द्वारा आयोजित कार्यक्रम में आमंत्रित करने के लिए आपका धन्यवाद। आपके इस कार्यक्रम के माध्यम से न केवल देश के शीर्ष विज्ञान संचारकों को एक साथ एक मंच पर आने का अवसर मिला बल्कि उन्हें हिन्दी में विज्ञान प्रचार-प्रसार जैसे अत्यंत संवेदनशील मुद्दे पर चर्चा में सम्मिलित करके सराहनीय कार्य किया है। आशा है कि यह संवाद विज्ञान लेखकों और संचारकों के लिए नई दिशा देगा और नए लोग विज्ञान लोकप्रियकरण के लिए प्रेरित हुये होंगे। उम्मीद है की भविष्य में भी इसी तरह विज्ञान लेखकों और विज्ञान संचारकों को एकसाथ एक मंच पर विज्ञान लोकप्रियकरण विषय पर विचार विमर्श करने के लिए अन्य कार्यक्रम आयोजित किए जाते रहेंगे, जिनके आधार पर विज्ञान संचार को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए रणनीति बनाई जा सकती है। इस दौरान आपके द्वारा विज्ञान नाटक गैलिलियो का मंचन बहुत ही सुंदर और प्रभावी था। इसके लिए नाटक के निदेशक और प्रोड्यूसर बधाई के पात्र हैं। दरअसल, समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण पैदा करने के लिए इस तरह के कार्यक्रम अत्यंत प्रभावी हो सकते हैं। रहने-ठहरने, आने-जाने और खान-पान की व्यवस्था से लेकर सम्पूर्ण कार्यक्रम बहुत अच्छा था। इस आशा के साथ कि 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' नित नई ऊंचाइयों को छूती रहे और विज्ञान लोकप्रियकरण के क्षेत्र में आप इसी तरह सभी को साथ लेकर आगे बढ़ते रहें, मैं पुनः आपका धन्यवाद करता हूँ। उम्मीद है कि आगे भी ऐसे कार्यक्रमों में शामिल होते रहेंगे।

– डॉ. ओम प्रकाश शर्मा

आपकी पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेख ज्ञानवर्धक होते हैं। विशेषकर कॅरियर स्तम्भ के अंतर्गत प्रकाशित सामग्री ज्ञानवर्धन के साथ मार्गदर्शक का कार्य भी करती है। कॅरियर स्तम्भ के अंतर्गत फायर इंजीनियरिंग पर प्रकाशित आलेख पढ़कर मैंने फायर इंजीनियरिंग, दिल्ली में दाखिला लिया है। ऐसे अच्छे आलेखों के लिए मैं आपका बहुत-बहुत आभारी हूँ।

– राजीव रंजन उपाध्याय, फैजाबाद

मैं आप सभी को बहुत-बहुत बधाई देता हूँ कि विज्ञान जागरुकता का यह कार्य आप इतने लंबे समय से करते आ रहे हैं। राष्ट्रीय स्तर पर बिना सरकारी सहायता के इतना व्यापक कार्य करके आपने असंभव को संभव कर दिखाया है। आगे भी आपकी टीम इसी तरह पूरे मनोयोग से विज्ञान जागरुकता का कार्य करती रहे। मेरी शुभकामनायें आपके साथ हैं।

– संजय गोस्वामी, मुंबई

‘इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए’ 250वाँ अंक विमोचन समारोह

- नाटक ‘गैलिलियो’ का मंचन
- विज्ञान फिल्म प्रदर्शन
- विज्ञान विमर्श
- टेलीस्कोप निर्माण एवं आकाश दर्शन कार्यशाला
- विज्ञान मॉडलों एवं प्रयोगों का प्रदर्शन
- विज्ञान फिल्मों का प्रदर्शन
- चलित विज्ञान प्रदर्शनी
- कम्प्यूटर आधारित गतिविधियाँ।

‘इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए’ 250वें अंक का विमोचन समारोह आईसेक्ट विवि भोपाल में संपन्न हुआ जो कि विज्ञान-विमर्श का जरिया बना। इस अवसर पर देश भर के विज्ञान लेखक, विज्ञान संचारक और विज्ञानप्रेमी उपस्थित हुए। समारोह में चार विभिन्न गतिविधियाँ सम्पन्न हुईं जिसमें पत्रिका का विमोचन, नाटक ‘गैलिलियो’ का मंचन, विज्ञान फिल्म प्रदर्शन तथा दो विचार सत्रों में विज्ञान परिचर्चाएं की गईं। पत्रिका का विमोचन मनोज पटैलिया, शरदचंद्र बेहार, इं.अनुज सिन्हा, डॉ.वि.दी. गर्दे, मनमोहन बाला, संतोष चौबे और विनीता चौबे द्वारा किया गया। विमोचन के दौरान संपादक संतोष चौबे ने 250वे अंक तक की इलेक्ट्रॉनिकी प्रकाशन यात्रा पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि आरंभ के वर्षों में ही हमने यह महसूस कर लिया था कि सिर्फ सरकारी सहयोग पर निर्भर रहकर कोई पत्रिका सतत रूप से नहीं निकाली जा सकती है। दूसरे इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर और दूरसंसार जैसे विषयों पर लिखने वाले लोगों को देश में उँगलियों पर गिना जा सकता था और उनमें से अधिकतर दिल्ली जैसे बड़े शहरों में थे और बहुत व्यस्थ थे। इसलिए लेखकों के साथ हमें नए लेखकों को पैदा भी करना था। हमने इस दिशा में काम करते हुए अपना

आईसेक्ट विश्वविद्यालय भोपाल में ‘इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए’ 250वें अंक का विमोचन समारोह संपन्न हुआ। समारोह में विभिन्न सत्रों में विज्ञान से संबंधित गतिविधियां आयोजित की गईं जिसमें महान नाटककार ब्रेख्त द्वारा रचित एवं संतोष चौबे द्वारा अनूदित नाटक गैलिलियो का मंचन किया गया। विज्ञान प्रसार द्वारा विज्ञान फिल्मों का प्रदर्शन हुआ। विज्ञान परिचर्चा एवं विमर्श के अंतर्गत ‘हिन्दी में विज्ञान लेखन : स्थिति एवं चुनौतियां’ तथा ‘विज्ञान का गल्प’ विषय पर चर्चा की गई। प्रश्नोत्तर सत्र में विज्ञान प्रेमियों की जिज्ञासा पर विज्ञान संचारकों एवं विज्ञान लेखकों द्वारा बात की गई। टेलिस्कोप निर्माण और आकाशदर्शन कार्यशाला, विज्ञान मॉडलों एवं प्रयोगों का प्रदर्शन आदि इस समारोह का मुख्य आकर्षण रहे।

नेटवर्क तैयार किया। आरंभ के कुछ वर्षों में राष्ट्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी संचार परिषद का सहयोग प्राप्त हुआ, बाद के वर्षों से अब तक इसका प्रसार-प्रचार हमारे नेटवर्क द्वारा हुआ। फलस्वरूप पत्रिका की पाठकीय संख्या तीस हजार हो गई। कभी-कभी प्रकाशन का आँकडा 50 हजार तक पहुँचा। इस अवसर पर मनोज पटेरिया, शरद चंद्र बेहार ने पत्रिका के प्रकाशन के संदर्भ में अपना अनुभव साझा किए।

द्वितीय सत्र में ब्रेख्त द्वारा रचित और संतोष चौबे द्वारा अनूदित नाटक 'गैलिलियो' का मंचन रंगकर्मी मनोज नायर के कुशल निर्देशन में हुआ जिसमें अपने एक मित्र सेग्रेड़ो के सवाल ''ईश्वर कहाँ है?'' के जवाब में गैलिलियो कहता है कि या तो वह सब में है या कहीं नहीं।

ब्रेख्त जैसे महान नाटककार की यह खूबी है कि वे बार-बार अंतस की बात को जनोन्मुखी बनाते है और विज्ञान के बरास्ते कला की ओर मुड़ते हैं। वे बार-बार यह भी साबित करते हैं कि वस्तुतः विज्ञान और कला एक ही तत्व के दो अभिरूप हैं। इस नाटक के अनुवादक भी वस्तुतः इसी परिपाटी के रचनाकार हैं। गैलिलियो और सेग्रेड़ो के संवाद में यह बात उकेरी गई है-

सेग्रेडो : गैलीलियो तुम्हारी बुद्धि क्या पूरी तरह नष्ट हो गई है? क्या तुम बिल्कुल नहीं समझते कि तुम क्या कर रहे हो? अगर जो तुम कह रहे हो वह सच है तो इसका अर्थ है धरती अन्य तारों की तरह सिर्फ एक तारा है, ब्रह्मांड का केन्द्र नहीं।

गैलीलियो : निश्चित ही और इस विशाल ब्रह्मांड अन्य तारे ग्रह और उपग्रह हमारी इस छोटी सी धरती के आसपास चक्कर नहीं लगाते।

सेग्रेडो : तो इस विशाल ब्रह्मांड में सिर्फ ग्रह और तारे हैं? तो ईश्वर कहां है?

गैलीलियो : क्या मतलब?

सेग्रेडो : ईश्वर। ईश्वर कहाँ है?

गैलीलियो : मुझे क्या पता? मैं कोई दार्शनिक थोड़े हूँ। मैं तो गणितज्ञ हूँ।

सेग्रेडो : सबसे पहले तुम एक आदमी हो, और एक आदमी के नाते मैं तुमसे पूछता हूँ ... ईश्वर कहाँ है?

गैलीलियो : या तो वह हम सबमें है ... या कहीं नहीं है।

सेग्रेडो : और यही कहने पर ब्रूनो को जिंदा जला दिया गया था।

गैलीलियो : उसने सिर्फ कहा था मैं सिद्ध करके दिखा सकता हूँ।

आरंभ के वर्षों में ही हमने यह महसूस कर लिया था कि सिर्फ सरकारी सहयोग पर निर्भर रहकर कोई पत्रिका सतत रूप से नहीं निकाली जा सकती है। दूसरे इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर और दूरसंसार जैसे विषयों पर लिखने वाले लोगों को देश में उँगलियों पर गिना जा सकता था और उनमें से अधिकतर दिल्ली जैसे बड़े शहरों में थे और बहुत व्यस्थ थे। इसलिए लेखकों के साथ हमें नए लेखकों को पैदा भी करना था। हमने इस दिशा में काम करते हुए अपना नेटवर्क तैयार किया। आरंभ के कुछ वर्षों में राष्ट्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी संचार परिषद का सहयोग प्राप्त हुआ, बाद के वर्षों से अब तक इसका प्रसार-प्रचार हमारे नेटवर्क द्वारा हुआ।

-संतोष चौबे

विज्ञान लेखन और विज्ञान जनसंप्रेषण के क्षेत्र में चली आ रही परंपरा से हटकर आईसेक्ट और 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' ने नए मानक रचे हैं। इसमें न केवल श्रेष्ठ प्रकाशन की वृहद श्रृंखला 'अनुसृजन' के माध्यम से शुरू की गई बल्कि आईसेक्ट स्टुडियो के माध्यम से रेडियो में विज्ञान पत्रिका और रंगमंच के माध्यम से विज्ञान नाटकों को जन सम्प्रेषण से जोड़ने की पहल की।

– विनय उपाध्याय

इसके पूर्व संचालक विनय उपाध्याय ने इसी संदर्भ में अपनी बात रखते हुए कहा– विज्ञान लेखन और विज्ञान जनसंप्रेषण के क्षेत्र में चली आ रही परंपरा से हटकर आईसेक्ट और 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' ने नए मानक रचे हैं। इसमें न केवल श्रेष्ठ प्रकाशन की वृहद शृंखला 'अनुसृजन' के माध्यम से शुरू की गई बल्कि आईसेक्ट स्टुडियो के माध्यम से रेडियो में विज्ञान पत्रिका और रंगमंच के माध्यम से विज्ञान नाटकों को जन सम्प्रेषण से जोड़ने की पहल की।

तीसरे सत्र में विज्ञान प्रसार द्वारा विज्ञान फिल्मों का प्रदर्शन किया गया। सबीर अब्बास द्वारा निर्देशित 'वेनेशिंग वल्चर' और मेथ्यु रहमान द्वारा निर्देशित 'साइंस विवाइंड इंडियन मोनोवेशन' फिल्मों के जरिए पर्यावरण के बिगड़ते संतुलन तथा मोनोमीटर साइंस को रेखांकित किया गया। 'वेनेशिंग वल्चर' पर चर्चा करते हुए कपिल तिवारी ने बताया कि हमारी प्राकृति संपदा के संतुलन में गिद्धों का महत्वपूर्ण योगदान है।

चौथा सत्र विज्ञान पर केन्द्रित रहा। इस सत्र में 'हिन्दी में विज्ञान लेखन : स्थिति और चुनौतियाँ' तथा 'विज्ञान का गल्प' विषय पर परिचर्चा हुई। इन दोनों सत्रों में देवेन्द्र मेवाड़ी, मनमोहन बाला, डॉ. प्रदीप मुखर्जी, पुष्पेन्द्र पाल सिंह, रविशंकर श्रीवास्तव, डॉ. प्रबल राय, डॉ. जाकिर अली 'रजनीश', डॉ.गिरिजा शंकर शर्मा, इरफान ह्यूमन, सुभाष चंद्र लखेड़ा, डी.डी.ओझा आदि ने वक्तव्य दिये। विमोचन समारोह के अवसर पर टेलिस्कोप निर्माण और आकाश दर्शन कार्यशाला आयोजित की गई जिसमें विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने भाग लिया। आंचलिक विज्ञान केन्द्र द्वारा विज्ञान मॉडलों एवं प्रयोगों का प्रदर्शन, चलित विज्ञान प्रदर्शिनी तथा कम्प्यूटर आधारित गतिविधियों का प्रदर्शन किया गया। इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए के २५०वें अंक की यात्रा पर केन्द्रित स्मारिका तथा ए.यू. टाइम्स का विमोचन भी किया गया। समारोह में देश भर से आये विज्ञान लेखक डॉ. मनोज पटेरिया, देवेन्द्र मेवाड़ी, सुभाषचन्द्र लखेड़ा, डॉ. इरफान ह्यूमन, डॉ.डी.डी.ओझा, कपिल त्रिपाठी, डॉ. मनमोहन बाला, मनीष मोहन गोरे, संजय गोस्वामी, राकेश शुक्ला, ओ.पी.शर्मा, धर्मेन्द्र कुमार मेहता, डॉ. जाकिर अली रजनीश, देवव्रत द्विवेदी, राजेन्द्र शर्मा अक्षर, डॉ. अनुराग सीठा, संतोष शुक्ला, डॉ.एन.के. तिवारी, रविशंकर श्रीवास्तव, चक्रेश जैन, डॉ. प्रबल राय, पुष्पेन्द्र पाल सिंह, संतोष कौशिक, डॉ.प्रदीप मुखर्जी, वसंत निरगुणे, कृष्णगोपाल व्यास, विकास शेंडे, रेखा श्रीवास्तव, एस.पी.सिंह, अनामिका चक्रवर्ती आदि ने भाग लिया।

समारोह में विज्ञान लेखकों ने कहा..

पिछले पचास वर्षों से कोशिश कर रहा हूँ कि जो लिखूं लोग उसे समझे। मैंने तरह-तरह के प्रयोग किये है इसलिए यह बताना चाहता हूं कि मैं जिस तरह देखता था, समझता था मेरा प्रयास था कि विज्ञान लेखन आम लोगों की भाषा में बता सकूं। मेरे लेखन का सबसे बड़ा मंत्र है कि एक कहे और दूसरा समझे।

– देवेन्द्र मेवाड़ी

भारत में विकास के बावजूद लोग अलग-अलग स्तर पर रह रहे हैं। इतने कम्यूनिकेशन के जमाने में भी गैप है। दो तरह के कल्चर चल रहे हैं, एक तो वे जो वैज्ञानिक विचारधारा रखते हैं, दूसरे वैज्ञानिक विचारधारा नहीं रखते। इन दोनों विचारधाराओं को मिलाना होगा। यदि हम इनको मिला पायेंगे तो विज्ञान ही नहीं समाज बहुत सारी समस्याओं को सुधार पायेंगे।

– मनोज पटेरिया

विज्ञान लेखन के लिए विज्ञान में रुचि जरूरी है और अभ्यास से रुचि बढ़ती है, अनुभव आता है। हर शब्द को जांचे। अनुवाद की भी समस्या है, वैज्ञानिकों के नाम की बात है उसके लिये एक साझा बात जरूरी है। सभी की जुगलबंदी जरूरी है। खेमेबंदी नहीं होना चाहिए।

– प्रदीप मुखर्जी

मैंने लेखन मिसाइल के बारे में लिखने से शुरू किया। जो साप्ताहिक हिन्दुस्तान में छपता था, 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' पत्रिका में मैं पिछले 26 सालों से लिख रहा हूँ। मेरा विश्वास है कि हिन्दी में यदि कोई लिखता है तो हिन्दी में ही सोचे।

– डॉ. मनमोहन बाला

विज्ञान और धर्म दोनों ही मनुष्य की प्रगति के लिए जरूरी है जैसे दूध और मट्ठा दोनों ही स्वास्थ्य के लिए जरूरी होते हैं लेकिन दोनों को मिलाना नहीं चाहिए। हमें विज्ञान लेखन करते समय मौलिकता का ध्यान रखना चाहिए और कॉपी-पेस्ट से बचना चाहिए।

– सुभाष चंद्र लखेड़ा

विज्ञान का लोकप्रियकरण आवश्यक है और यह समय की मांग है। विज्ञान लेखन समाज के लिए उपादेय हो। बाल उपयोगी लेखन की आवश्यकता है। आम आदमी को विज्ञान से जोड़ा जाना चाहिए।

– डी.डी. ओझा

विज्ञान यात्रा कार्यक्रम की लोकप्रियता और विज्ञान के लोकप्रियकरण में बड़ा कदम है। जन सामान्य विज्ञान चेतना जागृत करने में जन-संचार माध्यमों का विशेष योगदान है।

– अनामिका चक्रवर्ती

भूकंप

इस मातम को कैसे नापें?

विजन कुमार पांडे

अगर आप नेपाल की राजधानी काठमांडू पहले गए हों तो आज उसे पहचानना आपको मुश्किल हो जाएगा। 1932 में बना नौ मंजिला ऐतिहासिक धरहरा टावर, जिसकी आठवीं मंजिल पर चढ़कर हम पूरे काठमांडू को देखते थे, मलबे में बदल गया है। काठ की खूबसूरत स्थापत्य कला और मंदिरों के लिए दुनियाभर में मशहूर काठमांडू एक प्रकार से नष्ट हो चुका है। काठमांडू का काष्ठमंडप जिसे गोरखनाथ मंदिर कहा जाता है वह खत्म हो गया है। काठमांडू का नाम भी इसी से पड़ा था। काठमांडू काष्ठमंडप से ही बना है। काठमांडू में यूनेस्को द्वारा वर्ल्ड हेरिटेज साइट घोषित किया गया दरबार स्क्वेयर तबाह हो गया है। नेपाल में राजशाही के प्रतीक चिन्हों में से एक काठमांडू के दरबार चौक का चेहरा बदल गया है। शाही भवन के सामने स्थित इस इलाके में कई महत्वपूर्ण मंदिर, प्रतिमाएं, फव्वारे सब खत्म हो गए हैं। जनकपुर का नौलखा मंदिर और राम-जानकी विवाह मंडप को भी नुकसान पहुंचा है। भारत में भी उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार, झारखंड, सिक्किम, दिल्ली, पश्चिम बंगाल, चंडीगढ़, राजस्थान, गुजरात सहित कई राज्य इसकी चपेट में आ गए हैं। ऐसा लग रहा है कि संसार अब महाविनाश की ओर बढ़ रहा है। इसमें कोई संदेह नहीं कि प्रकृति हमसे बदला ले रही है।

यह तो सच है कि इंसान गलती कर रहा है। वह गलती करता है लेकिन उसे मानता नहीं है। उसे अपनी गलती पर पछतावा भी नहीं होता। इंसान ही तो है जिसने पहाड़ों का सीना छेदकर सुरंगें बनाईं। जंगल काट दिया। नदियों के रास्ते मोड़ दिए। गंगा का पानी पीने लायक नहीं छोड़ा। धरती पर बेतरतीब इमारतें खड़ी कर दी। अब क्या करता? मानव ने अपने को सर्वश्रेष्ठ साबित करने के लिए प्रकृति से खिलवाड़ किया। प्रकृति को बेदर्दी से लूटा। हमने अतिक्रमण किया नदियों पर, पहाड़ों पर, जंगलों पर और हम डरे नहीं। इंसान

जिन नदियों को हम मृतप्रायः समझ बैठे थे, उसने साबित कर दिया कि संकट उनपर नहीं हम पर है। वे हमें नेस्तानबूत कर देंगी। इंसान कितना भी शक्तिशाली हो जाए लेकिन भगवान के सामने वह हमेशा शक्तिहीन ही रहेगा। हिमालय की गोद में बसा नेपाल फिर हिल गया। इसके साथ ही भारत भी पिघल गया। नेपाल में कहर ढाने वाले भूकंप ने प्रकृति के सामने मनुष्य को एक बार फिर असहाय कर दिया है। मनुष्य के लिए भूकंप का अनुमान लगाना अभी भी टेढ़ी खीर है।

ने सोचा कि इस मनमानी को कोई देख तो रहा नहीं है। भगवान से भी हम नहीं डरे। बस, यही हमारी सबसे बड़ी भूल थी जो आज ये दुर्दिन देखने को मिला। केदारनाथ हादसे के वक्त भी बांध दी जाने वाली नदियों ने मनुष्य को अपनी ताकत का एहसास कराया था। लेकिन हम फिर भी नहीं चेते। जिन नदियों को हम मृतप्राय समझ बैठे थे, उसने साबित कर दिया कि संकट उन पर नहीं हम पर है। वे हमें नेस्तानबूत कर देगीं। इंसान कितना भी शक्तिशाली हो जाए लेकिन भगवान के सामने वह हमेशा शक्तिहीन ही रहेगा। हिमालय की गोद में बसा नेपाल फिर हिल गया। इसके साथ ही भारत भी हिल गया। नेपाल में कहर ढाने वाले भूकंप ने प्रकृति के सामने मनुष्य को एक बार फिर असहाय कर दिया है। मनुष्य के लिए भूकंप का अनुमान लगाना अभी भी टेढ़ी खीर है। पलों में सारा शहर खंडहर में बदल जाता है और हम देखते रह जाते हैं। लोग चिल्लाते रहे और धरती हिलती रही। नेपाल में धरती मां की गोद में उसके ही लाडले सदा के लिए सो गये। वैज्ञानिक देखते रहे वह तांडव नृत्य। वे भी क्या करते मजबूर थे। वे बस इतना बता सकते थे कि भूकंप की आशंका वाले इलाके कौन हैं? उनके पास ऐसा कोई यंत्र नहीं जो धरती के कंपन को रोक सके। हिमालय चट्टान की तरह खड़ा रहा और लोगों के आंसू गिरते रहे। नेपाल की तबाही देख सभी का दिल पिघल गया। जिसका जख्म बढ़ता ही जा रहा है।

नेपाल उन देशों में है जहां भूकंप का जोखिम सबसे ज्यादा है। इसका एक बड़ा कारण उसका हिमालय क्षेत्र में स्थित होना है। इसी पर्वतीय क्षेत्र में भारत का भी एक बड़ा हिस्सा है। इसीलिये भूकंप आने पर नेपाल के साथ भारत भी हिल जाता है। नेपाल के साथ भारत का अच्छा खासा इलाका भूकंप के लिहाज से जोखिम भरा है। हिमालय के भीषण भूकंप ने फिर साबित कर दिया कि प्राकृतिक आपदा की अनदेखी करना कितना खतरनाक है। भूकंपशास्त्री अनेक मौकों पर हिमालय में ऊंची तीव्रता वाले भूकंप की भविष्यवाणी करते रहे हैं। फिर भी हम हर साल भीषण भूकंपों से पैदा होने वाले विनाश को झेलते रहे हैं। नेपाल जो आज झेल रहा है कभी हमें भी यह कष्ट सहना पड़ेगा। हम अभी भी इसके प्रति सचेत नहीं हैं। हिमालयी इलाकों में अभी भी विकास के नाम पर तेजी से निर्माण कार्य हो रहे हैं। हमारे देश में भी थोड़े-थोड़े अंतराल में भूकंप की पुनरावृत्ति होती रहती है। आपदा प्रबंधन विभाग ने हमें बताया था कि हिमालय की तलहटी में काफी अलग ढंग की ढांचागत संरचनाएं मिली हैं। इसके जमीन के भीतर भारी मात्रा में ऊर्जा का भंडार है। एक न एक दिन यह ऊर्जा हमारे महाविनाश का कारण बनेगी। जब यह झटके से बाहर निकलने का प्रयास करेगी तो नेपाल-उत्तराखंड समेत हिमालय भी हिल जाएगा। हैरानी तो इस बात की है कि हम इन संकटों से बचाव का कोई ठोस जतन अभी भी नहीं कर रहे। हम क्षति हो जाने के बाद की स्थितियों से जूझते हैं। उसमें हमारी ज्यादा दिलचस्पी है। भूकंप से बचाव की तैयारियों का आलम यह है कि गुजरात और उत्तराकाशी जैसे अनुभव के बाद भी भूकंपरोधी इमारतें नहीं बन रहीं। विकास का नारे बुलंद हैं। अनगिनत विशाल और ऊंची इमारतें लगातार बन रही हैं। क्या इनमें भूकंप सहने की क्षमता है? इस सवाल का जवाब हमारे पास नहीं है। कहीं ऐसा तो नहीं कि हम विकास के नाम पर विनाश का रास्ता बना रहे हों। इसपर सभी को गंभीरता से सोचना होगा।

नेपाल उन देशों में है जहां भूकंप का जोखिम सबसे ज्यादा है। इसका एक बड़ा कारण उसका हिमालय क्षेत्र में स्थित होना है। इसी पर्वतीय क्षेत्र में भारत का भी एक बड़ा हिस्सा है। इसीलिये भूकंप आने पर नेपाल के साथ भारत भी हिल जाता है। नेपाल के साथ भारत का अच्छा खासा इलाका भूकंप के लिहाज से जोखिम भरा है। हिमालय के भीषण भूकंप ने फिर साबित कर दिया कि प्राकृतिक आपदा की अनदेखी करना कितना खतरनाक है। भूकंपशास्त्री अनेक मौकों पर हिमालय में ऊंची तीव्रता वाले भूकंप की भविष्यवाणी करते रहे हैं।

हम जान लें, भूकंप कभी भी बता कर नहीं आएगा। हमें अपनी गलतियों को सुधारने का मौका वह नहीं देगा। इसलिए हमें नेपाल की तबाही से सीख लेनी होगी। भूगर्भ वैज्ञानिकों का कहना है कि भारतीय उपमहाद्वीप शेष एशिया की ओर हर साल दो सेंटीमीटर की दर से बढ़ रहा है। दूसरी तरफ हिमालयी क्षेत्र का भीतरी भूभाग कुल 13

सेंटीमीटर से ज्यादा का दबाव सहन नहीं कर सकता। इस दबाव के कारण चट्टानों के अंदर घनीभूत ऊर्जा धरती को फाड़ने को तैयार है। वैज्ञानिकों का ऐसा अनुमान है कि हिमालय क्षेत्र में करीब नौ की तीव्रता का भूकंप कभी भी आ सकता है। अगर ऐसा हुआ तो हमारे सारे विकास के नारे विनाश में तब्दील हो जाएंगे। इसलिए विकास के साथ विनाश को भी रोकने का नारा बुलंद होना चाहिए। नेपाल दुनिया का सबसे ज्यादा भूकंप संभावित क्षेत्र है। यहां इतने भूकंप क्यों आते हैं इसे भी हमें समझना होगा। दरअसल इस क्षेत्र में पृथ्वी की इंडियन प्लेट यूरेशियन प्लेट के नीचे दबती जा रही है। इस कारण हिमालय ऊपर उठता जा रहा है। हर साल करीब पांच सेंटीमीटर ये यूरेशियन प्लेट के नीचे जा रही है। इससे हर साल हिमालय पांच मिलीमीटर ऊपर उठता जा रहा है। वहां के चट्टानों के ढांचे में एक तनाव पैदा हो जाता है। जब ये तनाव चट्टानों के बर्दाश्त के बाहर हो जाता है तो ये भूकंप आता है। आज भी वैज्ञानिक ये अंदाजा नहीं लगा सकते कि दुनिया में कब कहां और कितनी तीव्रता वाला भूकंप आएगा। लेकिन वैज्ञानिक यह जरूर कह रहे हैं कि हिमालयी क्षेत्र में बड़ा भूकंप कभी भी आ सकता है। इसलिए भारत को भी पहले से तैयार रहना होगा। विज्ञान इतना आगे जा रहा है लेकिन विडंबना यह है कि अभी भी हम इस क्षेत्र में बहुत पीछे हैं। इस दिशा में नये शोध की आवश्यकता है जिससे भूकंप आने की पहले से ही सूचना दी जा सके। वैसे वैज्ञानिक ऐसे तरीके की तलाश में हैं जिससे भूकंप के आने की संभावना का पता लगाया जा सके, लेकिन अभी तक इसमें कोई भी कामयाबी नहीं मिली है। हिमालय पर्वत श्रृंखला के बीच नेपाल पड़ता है। यहीं पर दुनिया की सबसे ऊँची चोटी माउंट एवरेस्ट है। इस क्षेत्र में काफी उर्वर घाटियां हैं। दुनिया की सबसे ऊँची 14 पहाड़ी चोटियों में से आठ यहीं पर स्थित हैं। इसलिए भी नेपाल पर भूकंप का खतरा ज्यादा है। नेपाल को दुनिया सबसे गरीब देश भी है। यहाँ की करीब एक चौथाई आबादी गरीब है। नेपाल की 80 फीसदी से ज्यादा आबादी कृषि पर निर्भर है। यहां की प्रति व्यक्ति वार्षिक आय 656 अमेरिकी डॉलर है। ऐसे में यह प्राकृतिक आपदा ने उसे और पीछे धकेल दिया है। नेपाल में जन-धन की जैसी हानि हुई है उसे देखते हुए उसकी जितनी सहायता की जाए कम है। इस देश की ऐतिहासिक इमारतों को भी अच्छी खासी क्षति पहुँची है। पहले से तमाम समस्याओं से जूझ रहे नेपाल को इस त्रासदी से उबरना आसान नहीं होगा। मोदी सरकार जिस तरह से मदद के लिए हाथ बढ़ाया है यह वास्तव में सराहनीय है। ऐसे में सभी राजनीतिक पार्टियों को बिना भेदभाव के खुले दिल से नेपाल की मदद करने की जरूरत है, क्योंकि वह हमारा एक अच्छा पड़ोसी देश भी है।

आज भी वैज्ञानिक ये अंदाजा नहीं लगा सकते कि दुनिया में कब कहां और कितनी तीव्रता वाला भूकंप आएगा। लेकिन वैज्ञानिक यह जरूर कह रहे हैं कि हिमालयी क्षेत्र में बड़ा भूकंप कभी भी आ सकता है। इसलिए भारत को भी पहले से तैयार रहना होगा। विज्ञान इतना आगे जा रहा है लेकिन विडंबना यह है कि अभी भी हम इस क्षेत्र में बहुत पीछे हैं। इस दिशा में नये शोध की आवश्यकता है जिससे भूकंप आने की पहले से ही सूचना दी जा सके।

क्या भूकंप का पूर्वानुमान लगाना संभव है? क्या वैज्ञानिकों को ये मालूम हो सकता है कि कब और कहां भूकंप आ सकता है? दरअसल विज्ञान की तमाम आधुनिकताओं के बाद भी ये संभव नहीं है। भूकंप आने के बाद उसके असर के दायरे में ये बताना संभव है कि भूकंप के झटके कहाँ, कुछ सेकेंड बाद आ रहे हैं। सोशल मीडिया में भूकंप आने के बारे में लगाए जा रहे कयास और टिप्पणियां बेबुनियाद और वैज्ञानिक तौर पर अतार्किक हैं। भूकंप विशेषज्ञ बताते हैं कि भूकंप के केंद्र में तो नहीं, लेकिन उसके दायरे में आने वाले इलाकों में कुछ सेकेंड पहले वैज्ञानिक तौर पर ये बताया जा सकता है कि वहां भूकंप आने वाला है। यह समय बेहद कम होता है। यही वजह है कि इसको लेकर पहले से ही कोई भविष्यवाणी नहीं की जा सकती। भारत में तो यह भी संभव नहीं है। लेकिन जापान में कुछ सेकंड पहले भूकंप का पता लग जाता है। ऐसे में बुलेट ट्रेन और परमाणु संयंत्रों को काम करने से रोक दिया जाता है।

कुछ सेकेंड पहले भी भूकंप का पता कैसे लग सकता है, इसकी भी जानकारी सभी को

आनी चाहिए। जब भी कोई भूकंप आता है तो दो तरह की वेव निकलती हैं। एक प्राइमरी वेब है और दूसरी सेकेंडरी वेब है। प्राइमरी वेव औसतन 6 किलोमीटर प्रति सेकेंड की रफ्तार से चलती है। जबकि सेकेंडरी वेव औसतन 4 किलोमीटर प्रति सेकेंड की रफ्तार से। इस अंतर के चलते प्रत्येक 100 किलोमीटर में 8 सेकेंड का अंतर हो जाता है। अर्थात भूकंप केंद्र से 100 किलोमीटर की दूरी पर 8 सेकेंड पहले पता चल सकता है कि भूकंप आने वाला है। इतने कम समय में कुछ भी नहीं किया जा सकता। अतः भूकंप के बारे में भविष्यवाणी करना नामुमकिन है। जापान और ताइवान जैसे देशों में इस तकनीक का इस्तेमाल होता है जिससे नुकसान काफी कम होता है। जापान में ऐसे भी बहुत भूकंप आते रहे हैं। इसलिए वहां सभी मकान भूकंपरोधी बनाए जाते हैं। अब वहां भूकंप आने से नुकसान नहीं होता। लेकिन वहीं भारत में लोग अभी भी इसके प्रति सचेत नहीं है। दरअसल भूकंप से लोग नहीं मरते, बल्कि उसके कारण मकान और पेड़ आदि गिरने से लोगों की मृत्यु होती है। हां, ऐसा माना जाता है कि भूकंप आने की जानकारी चूहे, सांप और कुत्ते को पहले हो जाती है। चूहे और सांप ज्यादातर पृथ्वी के अंदर ही रहते हैं इसलिए उनको भूकंप वेब का असर पहले ही हो जाता है। इसलिए वे कुछ अलग ढंग का व्यवहार करने लगते हैं। कुत्ते को भांपने की क्षमता ज्यादा होती है इसलिए उसे भी पहले ही एहसास हो जाता है कि भूकंप आने वाला है।

एवरेस्ट और ऊंचा हो रहा भूकंप के बाद नेपाल की राजधानी काठमांडू की तस्वीर ही बदल गई है। वहां केवल खंडहर ही दिखाई दे रहे हैं। यूनेस्को विश्व धरोहर की सूची में शामिल 'दरबार स्क्वॉयर' मलबे में तब्दील हो चुका है। वहां का मशहूर 'धरहरा टॉवर' धराशायी हो गया है। नेपाल में अक्सर भूकंप आते रहते हैं। यह दुनिया के सबसे सक्रिय भूकंप क्षेत्र में आता है। इसे समझने के लिए हिमालय की संरचना और पृथ्वी के अंदर की हलचल के बारे में जानना जरूरी है। हिमालय दरअसल भारतीय टेक्टोनिक प्लेट के यूरेशियन टेक्टोनिक प्लेट (मध्य एशियाई) के नीचे दबते जाने के कारण बना है। पृथ्वी की सतह की ये दो बड़ी प्लेटें करीब चार से पांच सेंटीमीटर प्रति वर्ष की गति से एक दूसरे की ओर आ रही हैं। इन प्लेटों की गति के कारण पैदा होने वाले भूकंप की वजह से ही एवरेस्ट और इसके साथ के पहाड़ ऊंचे होते जा रहे हैं। हिमालय के पहाड़ हर साल करीब पाँच मिलीमीटर ऊपर उठते जा रहे हैं। जिससे भारतीय प्लेट के ऊपर हिमालय का दबाव बढ़ रहा है। दरअसल इस तरह के दो या तीन फॉल्ट हैं। ऐसा अनुमान है कि इन्हीं में से किसी प्लेट के खिसकने से यह ताजा भूकंप आया है। कोई भी बड़ा भूकंप आता है तो शुरूआत में नुकसान कम नजर आता है। लेकिन बाद में यह बड़ी तेजी से बढ़ता जाता है। नेपाल के लिए तो भूकंप का डर हमेशा बना रहेगा, क्योंकि वह तो हिमालय की गोद में बसा है। तबाही सिर्फ इसलिए नहीं हुई कि भूकंप की तीव्रता बड़ी थी। यह रिक्टर स्केल पर 7.9 थी। बल्कि चिंता इस बात की है कि इस भूकंप का केंद्र बहुत उथला था- करीब 10 से 15 किलोमीटर नीचे इसका केंद्र था। इस कारण सतह पर कंपन और ज्यादा महसूस हुआ। हर विनाशकारी भूकंप के बाद 10-20 हल्के झटके और आते हैं लेकिन उनकी तीव्रता कम होती जाती है। यहां हमें यह जानना जरूरी है कि रिक्टर स्केल पर तीव्रता में हरेक अंक की कमी का मतलब है, बड़े भूकंप से 30 फीसदी कम ऊर्जा मुक्त होना। नेपाल में कई ऐसी इमारतें थी जो बहुत ही पुरानी थी। जब इमारतें पहले से ही जर्जर होती हैं तो एक छोटे से झटके भी उसे जमीदोज कर देते हैं। इसलिए नेपाल की जितनी भी पुरानी इमारतें थी सभी धराशायी हो गई। नेपाल गरीब देश है वहां की अधिकांश आबादी ऐसे घरों में रह रही है, जो किसी भी भूकंप के लिए बहुत ज्यादा खतरनाक है। यहां भूस्खलन की आशंका भी ज्यादा है। पहले भी कई ऐसे भूस्खलन हुए हैं जिनमें लोगों की जानें गई हैं। यहाँ अभी ऐसा भी अनुमान है कि इस पहाड़ी क्षेत्र में कई गांव मुख्य आबादी से कट गया हो या ऊपर से गिरने वाले पत्थरों या कीचड़ में दफन हो गया हो। हिमालय क्षेत्र पर नजर डालें तो पता चलता है कि 1934 में बिहार में 8.1 तीव्रता का भूकंप आया था। इसी तरह 1905 में 7.5 तीव्रता का भूकंप कांगड़ा में आया और 2005 में 7.6 तीव्रता का भूकंप काश्मीर में आया था। इसमें बाद के दो भूकंप काफी विनाशकारी थे, जिसमें करीब 1,00,000 लोग मारे गए थे और दसों लाख लोग बेघर हो गए थे। इस बार भी बिहार सबसे ज्यादा प्रभावित रहा है। इसका मुख्य कारण है भूकंप से बचाव की जानकारी का अभाव। इसलिए कभी भी भूकंप का झटका आने लगे तो लोगों को घरों से बाहर खुले स्थान में चले जाना चाहिए। मकानों को मजबूत बनाना चाहिए जिससे वे भूकंप के बड़े झटक सह सके। धरती के अंदर ज्यादा निर्माण कार्य न करें। अगर हम भूकंप के समय सतर्क रहेंगे तो भारी नुकसान से बचा जा सकता है। इंसान यह न भूले कि वह सर्वशक्तिमान नहीं है। मनुष्य का शरीर पंचतत्व से मिलकर बना है। मानव ने उस शक्ति को न सिर्फ चुनौती दी बल्कि उसके खिलाफ काम करना भी शुरू कर दिया। मानव ने प्रकृति के तमाम कानून तोड़े। तमाम चेतावनियों को नजर अंदाज किया। एक नई कुदरत की रचना करने की कोशिश की। इंसान ने पहाड़ों को खोखला कर दिया, जंगलों का सफाया कर दिया, नदियों का पानी रोक दिया। ऐसे में आखिरकार इंसान को उसकी इस गलती का सिला तो मिलेगा ही न। अंत में मैं यही कहूंगा कि प्रकृति हमें ऐसा दर्द दे रही है जिसको नापने के लिए मेरे पास कोई यंत्र नहीं है। आज विज्ञान भी असहाय है ऐसे दर्द को नापने के लिए। वह लाचार है ऐसे मातम को सहने के लिए।

vijankumarpandey@gmail.com

म्यू-न्यूट्रिनो की खोज से मिली नई दिशा

डॉ. के.एम. जैन

पदार्थों के प्रकाशीय गुणों का अध्ययन करने के दौरान भौतिकविद् हेनरी बैक्वेरल को कुछ ऐसे पदार्थ मिले जो स्वतः उत्सर्जन की क्षमता रखते थे । ऐसे पदार्थों को रेडियोएक्टिव पदार्थ कहा गया। इनसे उत्सर्जित होने वाले विकिरणों में धनावेशित अल्फा किरणें, ऋणावेशित बीटा किरणें तथा निरावेशित गामा विकिरण होती हैं। उस समय वैज्ञानिकों की नजर में यह बड़ी अजीब और रहस्यमय घटना थी क्योंकि इसमें बिना किसी बाह्य-ऊर्जा के सतत ऊत्सर्जन मिल रहा था।
भौतिकशास्त्री अर्नेस्ट रदरफोर्ड के मन में इस क्षेत्र में काम करने के लिये विशेष रूचि जागी। रसायनज्ञ एफ. डब्ल्यू.सॉडी के साथ मिलकर किये गये प्रयोगों के दौरान उन्होंने पता लगाया कि अल्फा किरणें जिन कणों से मिल कर बनी होती हैं, वे हाइड्रोजन से चार गुना भारी होते हैं तथा वे अत्यन्त तीव्र वेग से, बन्दूक की गोली की तरह, निकलते हैं। रदरफोर्ड ने इन कणों की सहायता से परमाणु की भीतर की दुनिया को जानने का प्रयास किया और निष्कर्ष निकाला कि परमाणु में धनात्मक भाग सर्वत्र फैले रहने की बजाय एक केन्द्रक या नाभिक के रूप में स्थानीकृत रहता है। अल्फा कणों से अपने प्रयोगों की शृंखला को आगे बढ़ाने पर उन्हें नाभिक में 'प्रोट्रान' नामक एक नये कण की उपस्थिति का प्रमाण मिला।

रेडियोएक्टिव पदार्थों से उत्सर्जित होने वाली बीटा किरणें जिन कणों से मिलकर बनी होती हैं, वे वास्तव में 'इलेक्ट्रॉन' हैं। जब बीटा कणों की ऊर्जा, कोणीय संवेग आदि का अध्ययन किया गया तब इनका उत्सर्जन भी अत्यंत रहस्यमय प्रतीत हुआ। तत्कालीन समय में 'इलेक्ट्रॉन' के परमाणु के अनिवार्य हिस्से होने पर किसी प्रकार का संदेह नहीं था लेकिन कई प्रेक्षण साफ बता रहे थे कि भले ही बीटा कण नाभिक के अंदर से बाहर आ रहे हों, लेकिन उन्हें नाभिक का अनिवार्य हिस्सा कदापि नहीं होना चाहिए। अगर ऐसा है तो फिर यह बीटा कण किस तरह नाभिक से उत्पन्न होकर बाहर आता होगा, एक विचारणीय प्रश्न बन गया। बीटा उत्सर्जन की समस्या को हल करने के दौरान किये जा रहे प्रयोगों से जो परिणाम मिल रहे थे, वे अब तक के स्थापित 'ऊर्जा और कोणीय संवेग संरक्षण' के नियमों के टूटने के संकेत दे रहे थे। लेकिन संरक्षण-नियमों का टूटना वैज्ञानिकों के गले नहीं उतर रहा था क्योंकि इनमें वैज्ञानिकों की अगाध श्रद्धा थी। इसीलिये इन नियमों

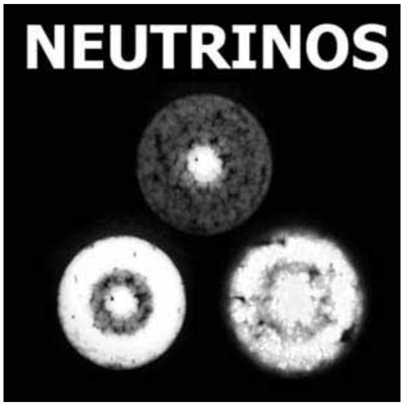

को बचाने के लिये तार्किक तरीके से वुल्फगैंग पॉली ने न्यूट्रिनो परिकल्पना प्रस्तुत की। इसके बाद एनरिको फर्मी ने बीटा-क्षय (डिके) को समझने के लिये एक सैद्धान्तिक ढ़ाँचा प्रस्तुत किया तथा प्रकृति में एक और नये प्रकार के बल (क्षीण नाभिकीय बल) के अस्तित्व में होने की बात सामने रखी।

फर्मी के सिद्धांत से जनित न्यूट्रिनो, बीटा क्षय से जुड़े प्रत्येक अध्ययन से प्राप्त परिणामों को समझने में अपनी अनिवार्यता तो साबित करता रहा, लेकिन यह सैद्धांतिक धरातल की सीमाएं लांघ कर प्रायोगिक धरातल पर अवतरित नहीं हो पाया। वैज्ञानिक इसे लेकर लम्बे समय तक ऊहापोह की स्थिति में बने रहे। न वे इसे नकार सकते थे और न ही प्रायोगिक पुष्टि के बिना इसे दिल से स्वीकार सकते थे। लेकिन इसी बीच दृढ़ संकल्पित फ्रेडरिक रैंन्स और क्लायड कोवन ने कुछ नाभिकीय प्रक्रियाओं के पहचान कर इस घटना को रिकार्ड करने में समर्थ 'संसूचक' बनाया जिससे उन्हें सन 1956 में न्यूट्रिनो के स्पष्ट हस्ताक्षर प्राप्त करने में सफलता मिल गई। यह सचमुच ही बहुत उपलब्धि थी। इसने 'क्षीण नाभिकीय बलों' के प्रति वैज्ञानिकों की रूचि को बहुत बढ़ा दिया।

फर्मी के सिद्धांत से जनित न्यूट्रिनो, बीटा क्षय से जुड़े प्रत्येक अध्ययन से प्राप्त परिणामों को समझने में अपनी अनिवार्यता तो साबित करता रहा, लेकिन यह सैद्धांतिक धरातल की सीमाएं लांघ कर प्रायोगिक धरातल पर अवतरित नहीं हो पाया। वैज्ञानिक इसे लेकर लम्बे समय तक उहापोह की स्थिति में बने रहे। न वे इसे नकार सकते थे और न ही प्रायोगिक पुष्टि के बिना इसे दिल से स्वीकार सकते थे।

कोलंबिया विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग में 'कॉफी ब्रेक' की एक परम्परा रही है। इस दौरान वहाँ के वैज्ञानिक भौतिकी की दुनिया में चल रहे आधुनिकतम विषयों और उठ रही समस्याओं पर चर्चा करते थे। बात सन् 1959 के अंतिम दिनों की है। ऐसे ही एक 'ब्रेक' के दौरान उच्च्व ऊर्जा पर क्षीण नाभिकीय बलों के अध्ययन की संभावना पर चर्चा आरंभ हुई। उस कॉफी ब्रेक में हो रही चर्चा में भाग लेने वालों में युवा 27 वर्षीय मेल्विन श्वार्ट्ज भी थे। चर्चा के दौरान कई विचार आये और गए, लेकिन कहीं कोई ठोस बात सामने नहीं आ रही थी। इससे कुछ समय के लिये माहौल निराशा और कुंठा में बदल रहा था। लेकिन श्वार्ट्ज आशांवित थे। जब वे घर लौटे तब वे रात में विचारमग्न हो बिस्तर में लेटे थे। अचानक उनके मन में एक आयडिया आया कि न्यूट्रिनो को एक 'टूल' के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है जिससे निश्चित ही 'क्षीण नाभिकीय बलों' का अध्ययन किया जा सकता है। कोलंबिया विश्वविद्यालय में इस क्षेत्र में गहरी रूचि रखने वाले अनुभवी भौतिकशास्त्रियों में जेक स्टिनबर्गर और लियॉन लेडरमॅन थे। स्टिनबर्गर एनरिको फर्मी के छात्र थे तथा उन्हीं की प्रेरणा से वे इस क्षेत्र में कार्य करने को लालायित हुए थे। अपनी पीएच.डी. थिसिस में उन्होंने म्यू-मिसॉन का अध्ययन करते हुए इसे 'त्रि-पिण्ड क्षय' बताया था जिनमें दो निरावेशित कण, न्यूट्रिनो और एण्टी-न्यूट्रिनो, होना चाहिये। इन दोनों को आपस में मिलकर एक 'गामा-रे फोटॉन' को जन्म देना चाहिये। लेकिन अपेक्षानुसार 'गामा-रे फोटॉन' नहीं मिल रहा था। यह एक बड़ी समस्या तत्कालीन वैज्ञानिकों के सामने थी।

जेक स्टिनबर्गर ने विचित्र कणों और न्यूट्रल पाय-मिसॉन पर महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। बुद्‌बुद् कोष्ठ के विकास में भी उनका उल्लेखनीय योगदान रहा था। इस तरह उनके पास इस क्षेत्र में काम करने का गहरा अनुभव था। अगले दिन श्वार्ट्ज ने इन साथियों के साथ अपने 'आयडिया' पर चर्चा की। सभी को उनके 'आयडिया' में दम नजर आया और बस यहीं से शुरूआत हो गई। इस चर्चा के बाद स्टिनबर्गर की रूचि विचित्र कणों के अध्ययन से न्यूट्रिनो की ओर मुड़ी। इस समय वैज्ञानिकगण न्यूट्रिनो को अनोखा कण तो मानते थे लेकिन किसी की भी कल्पना में यह नहीं था कि ये कण किसी अन्य प्रकार के भी हो सकते हैं। उनकी नजर में न्यूट्रिनो एक ही प्रकार का कण है जिसे अपने 'प्रतिकण' के साथ अस्तित्व में होना चाहिए, जिसे वोल्फगैंग पॉली और एनरिको फर्मी ने वैज्ञानिक जगत में प्रस्तुत किया था तथा जिसे सन 1956 में रैंस और कोवन ने खोजा था।

रैंस और कोवन के प्रयोग के बाद यह स्पष्ट हो गया था कि न्यूट्रिनो के लिए वास्तव में प्रत्येक पदार्थ पारदर्शी होता है। अतः इसकी किसी भी गतिविधि को मापना या जानना आसान नहीं होता। लेकिन आशांवित करने वाली एक बात जरूर थी और वह यह कि पदार्थ में से गुजरते हुए अरबों न्यूट्रिनो में से कोई एक न्यूट्रिनो नाभिक में स्थित किसी न्यूट्रॉन और प्रोटॉन से टक्कर भी कर सकते हैं। भलेही इस तरह की घटना के घटित होने की संभावना अत्यंत ही क्षीण हो, लेकिन यह 'शून्य' कदापि नहीं होती। इसीलिये वैज्ञानिकों को गहरा विश्वास हो गया कि इन टक्करों को घटते हुए अवश्य ही देखा जा सकता है।

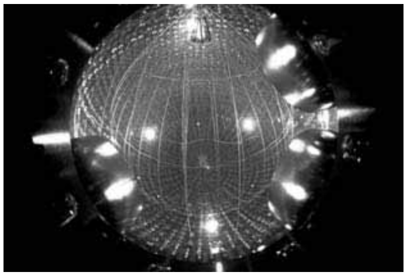

वैज्ञानिक इस बात को जानते थे कि न्यूट्रिनो 15 करोड़ किलोमीटर लंबी स्टील की दीवार में से भी बिना किसी परमाणु को छुए गुजर जाता है। इसका मतलब हुआ कि न्यूट्रिनो के बारे में जानने के लिये हमें बहुत ही लम्बी दीवार की आवश्यकता होगी। लेकिन, इसको बनाना असंभव है। ऐसे में क्या कोई वैकल्पिक व्यवस्था की जा सकती है? चिंतन के इस दौर में वैज्ञानिकों के मन में विचार आया कि अगर न्यूट्रिनो का पुंज ले कर प्रयोग किया जाय तो छोटी दीवार से भी बात बन सकती है। साथ ही टक्कर की संभावना बढ़ाने के लिए न्यूट्रिनो की ऊर्जा को भी कृत्रिम तरीके से बढ़ाया जा सकता है। इस तरह यह स्पष्ट हो गया कि टक्कर होने की संभावना को 'उच्च-ऊर्जा युक्त न्यूट्रिनो पुंज' के उपयोग से बहुत हद तक बढ़ाया सकता है।

विश्व के तत्कालीन सबसे शक्तिशाली कण त्वरक अल्टरनेटिंग ग्रेडियंट सिंक्रोट्रॉन की न्यूट्रिनो के पुंज को उत्पन्न करने की क्षमता से वैज्ञानिक परिचित हो रहे थे। यह अमरीका की ब्रुकहेवन लेबोरेटोरी में स्थापित था। इस सिंक्रोट्रॉन से मिले अत्यंत उच्च ऊर्जा के प्रोटॉनों की बेरिलियम से टक्कर होने पर अन्य कणों के साथ ही पाय-मिसॉनों की बौछार निकलती है। यह पहले से ही ज्ञात था कि 'पाय-मिसॉन' का क्षय 'म्यूऑन और न्यूट्रिनो' नामक कणों में होता है। स्टील की दीवार से गुजरते समय अपनी यात्रा के दौरान पाय-मिसॉन, म्यूऑन और न्यूट्रिनो में टूटते हैं जिनमें से म्यूऑन तो रास्ते में ही सोख लिए जाते हैं लेकिन न्यूट्रिनो अपनी यात्रा को निर्बाध रूप से जारी रखते हुए बाहर निकलते हैं। इस तरह न्यूट्रिनो के बीम को पाना वास्तविकता नजर आने लगा। जब गणना की तब पता चला कि स्टील की करीब 70 फीट मोटी दीवार से बात बन सकती है।

सिंक्रोट्रॉन से मिले अत्यंत उच्च ऊर्जा के प्रोटॉनों की बेरिलियम से टक्कर होने पर अन्य कणों के साथ ही पाय–मिसॉनों की बौछार निकलती है। यह पहले से ही ज्ञात था कि 'पाय–मिसॉन' का क्षय 'म्यूऑन और न्यूट्रिनो' नामक कणों में होता है। स्टील की दीवार से गुजरते समय अपनी यात्रा के दौरान पाय–मिसॉन, म्यूऑन और न्यूट्रिनो में टूटते हैं जिनमें से म्यूऑन तो रास्ते में ही सोख लिए जाते हैं लेकिन न्यूट्रिनो अपनी यात्रा को निर्बाध रूप से जारी रखते हुए बाहर निकलते हैं।

अब समस्या थी न्यूट्रिनो के द्वारा की जा सकने वाली अभिक्रिया को देखने के लिये व्यवस्था करने की ताकि न्यूट्रिनो से अभिप्रेरित किसी घटना को देखा जा सके। जब न्यूट्रिनो की खोज में वैज्ञानिक बीसवीं सदी की 60वीं दशक में निकले थे, तब पदार्थ की संरचना में 'क्वार्क' का विचार ही बहुत नया था। लेकिन क्वार्क की खोज के बाद जो तथ्य प्रकाश में आए, उनसे पता चला कि यह न्यूट्रिनो तो न्यूट्रॉन और प्रोटॉन के अंदर झांकने की बेहतर तकनीक उपलब्ध करा सकता है। जो मूल बात वैज्ञानिकों ने पकड़ी वह थी, निरावेशित न्यूट्रिनो इनसे अंतःक्रिया कर आवेशित कण को जन्म देता है। और इसी विचार ने उन्हें एक नए डिटेक्टर को विकसित करने का आयडिया दिया जिसकी चर्चा हम आगे कर रहे हैं।

इस प्रयोग के लिये सबसे पहले उच्च ऊर्जा वाले न्यूट्रिनो के पुंज को पाने की जरूरत थी। इसके लिए ब्रुकहेवन लेबोरेटोरी में नया 'प्रोटॉन त्वरक' स्थापित हो ही चुका था। अब कोलंबिया और ब्रुकहेवन की साझेदारी में कार्य शुरू हुआ। त्वरक से निकलने वाले प्रोटॉनों की पहले बैरिलियम से टक्कर कराई गई। इस दौरान कई कण निकले जिनमें पॉयान भी थे। अब इन कणों को स्टील की दीवार से गुजारा गया तथा 'न्यूट्रिनो के पुंज' को प्राप्त कर लिया गया। अब न्यूट्रिनो

को पकड़ने की व्यवस्था करना थी। इसके लिए इन वैज्ञानिकों ने उसी आयडिया का इस्तेमाल किया जिसे रैन्स और कोवन ने किया था। वह आयडिया था जिसमें व्युतक्रम बीटा-अभिक्रिया को घटित होते हुए देखना था। इसमें एंटीन्यूट्रिनो की न्यूट्रॉन के साथ अभिक्रिया के स्थान पर न्यूट्रिनो की प्रोटॉन के साथ अभिक्रिया होना थी तथा इस प्रयोग के दौरान अब उन्हें 'प्रोटॉन और पॉजीट्रॉन' के स्थान पर 'न्यूट्रॉन और इलेक्ट्रॉन' मिलना था।

वैज्ञानिक इस तथ्य से परिचित थे कि उच्च ऊर्जा युक्त आवेशित कण जब भी किसी परमाणु से टकराता है तो वह उसके बाह्य इलेक्ट्रॉन को मुक्त करते हुए उसे आवेशित कर देता है। विद्युत क्षेत्र के प्रभाव में यह घटना चिनगारी को जन्म देती है। इस प्रेक्षण ने इन उत्साही वैज्ञानिकों को एक नये प्रकार के संसूचक (डिटेक्टर) बनाने का रास्ता सुझाया। यह स्फुलिंग कोष्ठ यानि स्पार्क चैम्बर था। इस संसूचक में अल्यूमिनियम की 2.5 सेंटीमीटर मोटी 90 प्लेटें प्रयुक्त की गईं जिनका कुल वजन लगभग दस टन था। प्रयोग आरंभ करने के साथ ही इन प्लेटों के बीच बहुत ही उच्च विद्युत विभवांतर लगाया गया तथा इन प्लेटों के बीच में नियॉन गैस भरी गई। ऐसा इसलिये किया गया ताकि न्यूट्रिनो अपने मार्ग में पड़ने वाले किसी अल्यूमिनियम के नाभिक से टकराकर अंतःक्रिया के दौरान उत्पन्न आवेशित कण प्लेटों के बीच नियॉन में स्पार्क उत्पन्न कर न्यूट्रिनो के गुजरने की सूचना दे सके!

आशांवित वैज्ञानिकों ने सोच के अनुरूप स्पार्क चैम्बर को डिजाइन किया। उनकी गणना के अनुसार दस टन अल्यूमिनियम में आने वाले परमाणुओं से पुंज में आने वाले करोड़ों न्यूट्रिनो के द्वारा कम से कम दस टक्कर प्रति दिन के हिसाब से अवश्य होगी।

करीब 25 दिनों तक प्रयोग चला। इस दौरान करीब दस करोड़ न्यूट्रिनो चैम्बर में से गुजरे। लेकिन इनमें से मात्र 51 ही चिनगारियों के माध्यम से अपनी उपस्थिति दर्शाने में कामयाब हो सके। हालांकि यह संख्या उनकी अपेक्षा से बहुत कम थी। लेकिन यह इतनी पर्याप्त अवश्य हो गई जिनसे साबित हो गया कि न्यूट्रिनो का अस्तित्व है। इसतरह यह रैन्स और कोवन द्वारा किये गये प्रयोग के बाद दूसरा सफल प्रयोग बन गया।

अब परिणामों का विश्लेषण किया गया। अपने प्रयोग में हर बार टक्कर के परिणाम स्वरूप उन्हें 'म्यूऑन' ही मिला, जबकि अपेक्षानुसार उन्हें 'इलेक्ट्रॉन' भी मिलना चाहिये था। इससे स्पष्ट हुआ कि उनका 'न्यूट्रिनो' रैन्स और कोवन द्वारा पूर्व में खोजे गये 'न्यूट्रिनो' से भिन्न था। अब इन वैज्ञानिकों को यह समझने में देर नहीं लगी कि न्यूट्रिनो अंतःक्रिया करते समय अपनी पहिचान को नहीं भूलता है और याद रखता है कि इसका जन्म कब और किसके साथ हुआ है। अगर न्यूट्रिनो का जन्म आवेशित इलेक्ट्रॉन के साथ हुआ है तो अंतक्रिया के बाद इलेक्ट्रॉन को और अगर इसका जन्म म्यूऑन के साथ हुआ है तो यह अंतक्रिया के बाद म्यूऑन को ही जन्म देता है। अतः इन वैज्ञानिकों द्वारा खोजे गये न्यूट्रिनो को एक नये प्रकार के न्यूट्रिनो 'म्यू-न्यूट्रिनो' के रूप में पहिचाना गया। इसने रैंस और कोवन द्वारा पूर्व में खोजे गये न्यूट्रिनो को 'इलेक्ट्रॉन-न्यूट्रिनो' के नाम से स्पष्ट पहिचान दे दी। इसतरह दो प्रकार के 'न्यूट्रिनो' मिलने से कणों की दुनिया का क्लिष्ट परिदृश्य अब और भी क्लिष्ट हो गया।

बीसवीं सदी की साठवीं दशक तक सौ से अधिक कण खोजे जा चुके थे। म्यू-न्यूट्रिनो की खोज ने मूल कणों के वर्गीकरण का रास्ता सुझाया जिससे 'कण भौतिकी' (पार्टिकल फिजिक्स) में एक नए युग की शुरूआत हो गई। वैज्ञानिकों को समझ में आ गया कि ब्रह्माण्ड में उपस्थित पदार्थ और ऊर्जा को बनाने में लगे मूल कणों को दो मुख्य परिवारों में बांटा जा सकता है। पहला परिवार उन कणों का है जो प्रोटॉन और न्यूट्रॉन जैसे से कणों के निर्माण के लिए उत्तरदायी हैं और दूसरा परिवार उन कणों का है जो इलेक्ट्रॉन जैसे कणों के निर्माण के लिए उत्तरदायी हैं। इन दोनों परिवारों के नाम क्रमशः क्वार्क और लेप्टॉन परिवार हैं। इसके बाद खोज का जो सिलसिला चला उससे शीघ्र ही वैज्ञानिक पदार्थ के मानक मॉडल को खड़ा करने में कामयाब हो गए। मानक मॉडल में क्वार्क-लेप्टॉन सममिति होती है। इस सममिति का मतलब है कि ब्रह्माण्ड में जितने प्रकार के क्वार्क हैं, उतने ही प्रकार के लेप्टॉन भी होना चाहिए। म्यू-न्यूट्रिनो की खोज के बाद लेप्टॉन परिवार में कुल चार सदस्य हो गए। इनमें इलेक्ट्रॉन और म्यूऑन नामक दो आवेशित कण और इनके निरावेशित साथियों के रूप में दो प्रकार के न्यूट्रिनो क्रमशः इलेक्ट्रॉन-न्यूट्रिनो और म्यूऑन-न्यूट्रिनो थे। चूंकि प्रत्येक कण का प्रतिकण भी होता है, अतः इन चार कणों के चार और प्रतिकण, पॉजीट्रॉन, एंटीम्यूऑन, एंटीइलेक्ट्रॉन-न्यूट्रिनो और एंटीम्यूऑन -न्यूट्रिनो भी इस परिवार के सदस्य के रूप में शामिल हो गए। इस समय तक क्वार्क परिवार में शामिल होने के लिए कुल तीन सदस्य अप, डाउन और स्ट्रेंज (और इतने ही इनके प्रतिकण) ही मिल सके थे। अतः सममिति को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिकों को चौथे क्वार्क के भी अस्तित्व में होने की आशा थी। तदनुरूप इसकी भविष्यवाणी भी कर दी गई जिसकी खोज 1974 में जा कर पूरी हुई। इस चौथे क्वार्क को वैज्ञानिकों ने चार्म नाम से संबोधित किया। भौतिकी में इस खोज को 'नवम्बर क्रांति' के नाम से जाना जाता है और इसका श्रेय

सेम्यूल टिंग व बर्टन रिच्टर को जाता है जिन्हें आगे चल कर 1976 के भौतिकी के नोबेल पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया। इस कार्य को 'क्रांति' इसलिए माना गया क्योंकि तत्कालीन वैज्ञानिकों को लगा कि इस खोज के बाद ब्रह्माण्ड के सारे 'बिल्डिंग ब्लॉक्स' खोज लिए गए हैं। अभी ज्यादा समय बीता ही नहीं था और तभी सन् 1975 में मार्टिन पर्ल ने लेप्टॉन परिवार के म्यूऑन से भी भारी एक और सदस्य टॉऑन के अस्तित्व में होने की सूचना दी। इसी दौरान 1974 से 1977 के बीच मार्टिन पर्ल द्वारा किए गए 'टॉऑन' के क्षय के अध्ययन के दौरान ऊर्जा और संवेग के मान अपेक्षा से कम मिलने के कारण टॉऑन-न्यूट्रिनो के अस्तित्व में होने की भनक मिली। इसीलिए वैज्ञानिकों ने 'टॉऑन' के निरावेशित साथी 'टॉऑन-न्यूट्रिनो' के होने की भविष्यवाणी कर दी। इससे लेप्टॉन परिवार के सदस्यों की संख्या चार से बढ़ कर छह हो गई। मानक मॉडल में अभिव्यक्त हो रही सम्मति को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिकों ने क्वार्क परिवार में भी छह सदस्यों के अस्तित्व में होने की भविष्यवाणी कर दी। सन् 1977 में पांचवे क्वार्क को भी खोज लिया गया। इसे ब्यूटी या बॉटम नाम दिया गया। इस क्वार्क की खोज में लियॉन लेडरमॅन की अहम् भूमिका रही। सममिति के आधार पर की गई भविष्यवाणी के अनुसार अंतिम क्वार्क को सबसे भारी, लगभग स्वर्ण के नाभिक के बराबर द्रव्यमान वाला, होना चाहिए (हालांकि यह आज भी अनुत्तरित प्रश्न है कि क्यों इस छटवें क्वार्क को इतना भारी होना चाहिए?)। हालांकि इसकी खोज भी सन् 1995 में हो गई। इसे ट्रूथ या टॉप क्वार्क के नाम से जाना गया। अब बारी थी अंतिम बचे लेप्टॉन 'टॉऑन-न्यूट्रिनो' को खोजने की। और, बीसवीं सदी के अंत तक इसे भी खोज लिया गया। पदार्थ के मानक मॉडल में कण द्रव्यमान-रहित मिल रहे थे। लेकिन वास्तव में मॉडल में शामिल सभी कणों द्रव्यमानरहित नहीं होते है। अतः इन कणों में द्रव्यमान के लिये पीटर हिग्स के द्वारा हिग्स बोसॉन की भविष्यवाणी की गई जिससे मानक मॉडल को पूर्णता मिली। हाल ही में बिगबैंग-2 प्रयोग के पहले चरण में में प्रोटॉनों की टक्कर के दौरान लार्ज हैड्रॉन कोलायडर में इसे खोज लिया गया। इसतरह 'मानक मॉडल' के सभी आधारों की प्रायोगिक पुष्टि हो गई। अब मात्र '6 क्वार्क', '6 लेप्टॉन' और हिग्स बोसॉन से पदार्थ के संबंध में जाना और समझा जा सकता है। इस तरह म्यू-न्यूट्रिनो की खोज के बाद मिली राह से पदार्थ निर्माण की पाक शास्त्रीय विधि का पता चल गया। अब जिज्ञासाजन्य कई प्रश्नों यथा, कैसे ब्रह्माण्ड बना, कैसे यह काम करता है आदि के सटिक उत्तर खोजने में मदद मिल सकेगी। स्मरणीय है कि इस खोज के दौरान किये गये प्रयासों ने 'न्यूट्रिनो फैक्ट्री' के निर्माण की तकनीक उपलब्ध करा दी। इसने अंतरिक्ष से मिलने वाले न्यूट्रिनो के अध्ययन के लिये वैज्ञानिकों को 'न्यूट्रिनो ऑब्जर्वेटरी' स्थापित करने को प्रेरित किया। इन सबके कारण न्यूट्रिनो प्रकृति के सूक्ष्म रहस्यों को जानने और समझने का एक महत्त्वपूर्ण औजार बन गया। सच कहा जाये तो आज वैज्ञानिकों को ब्रह्माण्ड के देखने और समझने के लिये न्यूट्रिनो के रूप में एक नई खिड़की मिल गई है। सोलर न्यूट्रिनो के अध्ययन हेतु किये गये प्रयोगों के दौरान 'न्यूट्रिनो दोलन' मिले हैं जो तत्कालीन धारणा के विपरीत इनमें द्रव्यमान होने की पुष्टि कर रहे हैं। यह चौंकाने वाला तथ्य है जो पदार्थ के 'मानक मॉडल' के परे भी भौतिकी के विस्तारित होने की ओर संकेत कर रहा है।

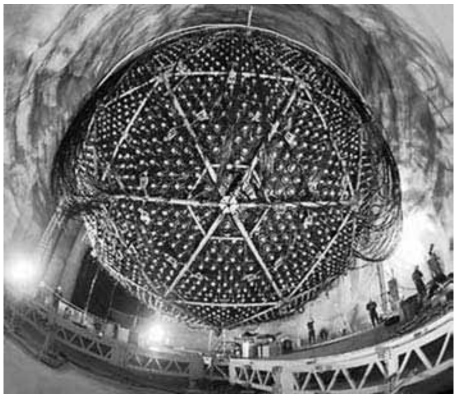

आज वैज्ञानिकों को ब्रह्माण्ड के देखने और समझने के लिये न्यूट्रिनो के रूप में एक नई खिड़की मिल गई है। सोलर न्यूट्रिनो के अध्ययन हेतु किये गये प्रयोगों के दौरान 'न्यूट्रिनो दोलन' मिले हैं जो तत्कालीन धारणा के विपरीत इनमें द्रव्यमान होने की पुष्टि कर रहे हैं।

इस तरह सन् 1961 में हुई म्यू-न्यूट्रिनो खोज ने पदार्थ और ऊर्जा की समझ के लिए जो आधार प्रस्तुत किया वह भौतिकी के इतिहास का मील का पत्थर साबित हुआ। इसके बाद भौतिकी में अनुसंधान हेतु कई नये रास्ते खुले। इस महत्त्वपूर्ण खोज के लिये तीनों वैज्ञानिकों को सन् 1988 के भौतिकी के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 27 साल के इंतजार के बाद मिले इस पुरस्कार पर खुशी जाहिर करते हुए लेडरमॅन ने कहा कि यह नोबेल पुरस्कार न्यूट्रिनो की खोज से अधिक उसके एक औजार यानि टूल के रूप में इस्तेमाल हो सकने के प्रमाण जुटाने के लिये है जो निश्चित ही युवाओं को मौलिक अनुसंधान की ओर आकृष्ट करेगा। और, उन जिज्ञासु युवाओं के शोध बतायेंगे कि किसतरह यह न्यूट्रिनो-औजार ग्लोबल वार्मिंग और ग्रीन हाउस प्रभाव जैसी समाज की वर्तमान समस्याओं के समाधान खोजने में सहायक हो सकता है।

kapurmaljain2@gmail.com

‘रोबोट’ शब्द वस्तुतः प्राचीन स्लावोनिक भाषा के शब्द ‘रोबोटा’ से लिया गया है जिसका अर्थ होता है ‘काम’ या ‘कार्य’। शब्द का मूल उद्‌भव जर्मन माषा के शब्द ‘आर्बिएट’ के साथ हुआ जिसका शाब्दिक अर्थ भी ‘काम’ ही होता है। चेक भाषा में इस शब्द का अर्थ होता है ‘बंधुआ मजदूर’। कैपेक ने अपने नाटक ‘आर.यू.आर.’ में यह शब्द इसी आशय से प्रयोग किया है।

रोबोट शब्द के जनक

डॉ.अरविन्द दुबे

इस प्रश्न का उत्तर आप में से बहुत से लोग आसानी से दे देंगे। ‘रोबोट’ शब्द का पहले-पहले प्रयोग जिस व्यक्ति ने किया था वह न तो वैज्ञानिक था, न इंजीनियर, न मैकेनिक। वह एक नामचीन नाटककार थे; चेक गणराज्य के लब्धप्रतिष्ठित लेखक केरेल कैपेक। उन्होंने ही पहले-पहल अपने एक विज्ञानकथा नाटक ‘रोसम्स यूनीवर्सल रोबोट्स’ (आर.यू.आर.) में ‘रोबोट’ शब्द का प्रयोग किया था। पर क्या सचमुच रोबोट शब्द उन्हीं के दिमाग की उपज थी?

‘रोबोट’ शब्द का अर्थ क्या है? ‘रोबोट’ शब्द वस्तुतः प्राचीन स्लावोनिक भाषा के शब्द ‘रोबोटा’ से लिया गया है जिसका अर्थ होता है ‘काम’ या ‘कार्य’। शब्द का मूल उद्‌भव जर्मन माषा के शब्द ‘आर्बिएट’ के साथ हुआ जिसका शाब्दिक अर्थ भी ‘काम’ ही होता है। चेक भाषा में इस शब्द का अर्थ होता है ‘बंधुआ मजदूर’। कैपेक ने अपने नाटक ‘आर.यू.आर.’ में यह शब्द इसी आशय से प्रयोग किया है। पहले इस के लिए ऑटोमेटॉन और एंड्रॉइड जैसे शब्द प्रयोग किए जाते थे। ‘रोबोट’ के बारे में क्या थी, कैरेल कैपेक की कल्पना?

जिस प्रकार की रचनाओं या यांत्रिक मानवों के लिए कैपेक ने ‘रोबोट’ शब्द का प्रयोग किया था वह वस्तुतः आज के ‘रोबोट’ से कतई मेल नहीं खाते हैं। कैपेक के यह ‘रोबोट’ आज के रोबोट जैसी धातु की बनी मशीनें नहीं थे वरन्‌ वह और एक तरह की जीवित (जैवीय या बायोलोजीकल) मशीनें थीं जो बोल-चाल, व्यवहार और दिखने में बिलकुल मानवों जैसे थे। यहाँ तक कि उन्हें बहुत बार मानवों से अलग पहचानना भी कठिन हो जाता था। चूंकि कैपेक के जमाने में जैनेटिक इंजीनियरिंग का अता-पता तक न था इसलिए कैपेक की परिकल्पना में इन रोबोट्स के अंग-प्रत्यंग कारखानों में बनाए जाते थे फिर इन्हें कारखानों में अन्य मशीनों की तरह ही जोड़ा (असेम्बल) किया जाता था। उनके अनुसार यह रोबोट्स जैव मशीनें तो थे पर उनमें स्वयं उत्पादन क्षमता या प्रजनन नहीं होता था। कैपेक की इन जैविक मशीनों में सोचने व निर्णय लेने की क्षमता थी, उनमें भावनाएं थीं। कुल मिला कर वह एक तरह से स्वतंत्र मानवों की तरह की व्यवहार करते थे।

‘रोबोट’ शब्द के सर्वमान्य जनक, केरेल कैपेक मूलतः एक ऐसे साहित्यकार थे जिनके स्पष्ट सामाजिक और राजनैतिक सरोकार थे। जिसके चलते उन्हें जीवन भर संघर्ष करना पड़ा और गंभीर परेशानियों से दो-चार होना पड़ा। केरेल का जन्म 9 जनवरी 1890 को चेक गणराज्य में स्थित उत्तरी पूर्वी बोहेमियां में त्रुतनेव जिले के मेल स्वातोनोविस में हुआ था। पिता अंतोनिन कैपेक पेशे से डाक्टर थे जबकि मां बोजेना

केपकोवा एक गृहणी। अपने भाई-बहनों में केरेल सबसे छोटे थे। उनसे बड़ा एक भाई था, जोसफ कैपेक, जो आगे चलकर एक प्रख्यात चित्रकार बना, और एक बहिन। केरेल की प्राथमिक शिक्षा पास के कस्बे यूपिस में हुई जहां उनके पिता आकर डाक्टरी की प्रैक्टिस करने लगे थे। आगे की शिक्षा के लिए वह 1900 में अपनी दादी के पास पूर्वी बोहेमिया के एक प्रसिद्ध शहर हेडेक क्रेलोव चले गए जहाँ उन्होंने मिडिल स्कूल और हाई स्कूल की पढ़ाई की। सन् 1905 में हाई स्कूल की पढ़ाई के दौरान, एक बहिष्कृत छात्र संघ की सदस्यता लेने के आरोप में केरेल को स्कूल से निकाल दिया गया था। इससे निराश होकर वह अपनी विवाहित बड़ी बहन के पास, ब्रनौ चले आए और यहां दो वर्षों तक रहे। दो साल बाद वह अपने परिवार के पास प्राग (Prague) लौटे और सन् 1909 में उन्होंने स्नातक की डिग्री हासिल की। इसके बाद की उनकी पढ़ाई प्राग, बर्लिन, व पेरिस के विश्वविद्यालयों में हुई और उन्होने 1915 में दर्शनशास्त्र में स्नातकोत्तर उपाधि हासिल की। केरेल की अपने बडे भाई जोसेफ से काफी पटती थी यहां तक कि उन्होने कई नौकरियां भी साथ-साथ कीं, कई उत्तरदायित्व भी साथ-साथ संभाले। सन 1920 में केरेल की मुलाकात एक सुदंर अभिनेत्री ओल्गा से हुई जो जल्दी ही नजदीकियों में बदल गई। पंद्रह वर्षों के रोमांस के बाद ओल्गा और केरेल दाम्पत्य सूत्र में बंध गए। सन् 1920 में केरेल ने अपना विश्वप्रसिद्ध नाटक 'रोसम्स यूनीवर्सल रोबोट्स (आर.यू. आर.) लिखा जिसमें उन्होने सर्वप्रथम 'रोबोट' शब्द का प्रयोग किया जिसके लिए वह दुनिया भर में जाने जाते हैं।

केरेल की सामाजिक व राजनैतिक प्रतिबद्धता तब मुखरित हुई जब उन्होंने अपने मित्र और चेकोस्लोवाकिया के तत्कालीन राष्ट्रपति तोमस गैरिक मसरिक की उपस्थिति में सन् 1927 की नव वर्ष पार्टी में चेकोस्लोवाकिया के राजनैतिक परिदृश्य पर कई व्यंग किए। यह सब अधिकारियों को नाराज करने भर को काफी था। प्रेस और मीडिया ने पूर्व नियोजित ढंग से उनके खिलाफ आंदोलन छेड़ दिया। कुपित केरेल ने आंदोलन करने वाले समाचार पत्रों के मालिकों के खिलाफ मानहानि को मुकदमा ठोंक दिया। अखबारों ने अंततः केरेल से क्षमा याचना की और इसे अपने पत्रों में भी प्रमुखता से छापा भी। 28 अक्टूबर 1927 को चेक गणतंत्र के स्वतंत्रता दिवस पर केरेल को अपने भाई जोसफ के साथ उनके नाटक 'एडम, दी क्रिएटर' के लिए नाटकों का राष्ट्रीय पुरस्कार भी दिया गया। सन 1935 में कैपेक को अंतर्राष्ट्रीय पेन क्लब के तत्कालीन सभापति, प्रख्यात लेखक एच.जी. वेल्स (टाइम मशीन के लेखक) ने अतंर्राष्ट्रीय पेन क्लब के सभापति के पद के लिए मनोनीत किया पर केरेल ने यह प्रस्ताव ठुकरा दिया। नबम्बर 1936 में नार्वे के प्रेस संगठन ने केरेल को साहित्य के नोबेल पुरस्कार के लिए मनोनीत भी किया। जिस दौर में केरेल जी रहे थे वह हिटलर का दौर था। उसकी वक्रदृष्टि चेकोस्लोवाकिया पर थी। उसने किसी न किसी

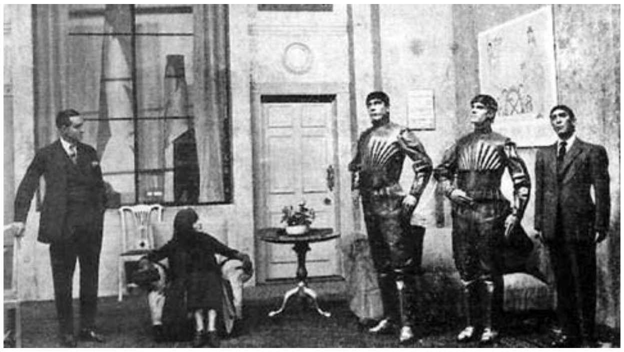

नाटक रूर का एक दृश्य जिसमें तीन रोबोट दिखाई दे रहे हैं।

बहाने इस देश के सीमावर्ती इलाके हथियाए और अब उसी मंशा पूरे चेकोस्लोवाकिया पर अधिकार करने की थी। केरेल ने लेखन के साथ-साथ इस अतिक्रमण के खिलाफ देश की जनता को भी उत्साहित किया और मित्र राष्ट्रों को जर्मनी बढ़ते प्रभुत्व के खतरे से आगाह करने को अपना मिशन बना लिया। नजियों ने इसके लिए उन्हें 'पब्लिक एनीमी नंबर-2' घोषित कर दिया। जब म्यूनिख समझौते के तहत जर्मनी ने बोहेमिया को अपने कब्जे में ले लिया तब भी केरेल ने अपना देश नहीं छोड़ा, जब कि तब उन्हें पकड़े जाने और कांस्ट्रेशन कैम्प में डाल दिए जाने का खतरा था; जैसा कि बाद में उनके बडे भाई जोसेफ कैपेक के साथ हुआ। केरेल सारी जिंदगी 'स्पोंडलाइटिस' से पीड़ित रहे जिसके चलते उन्हें सेना में भरती नहीं किया गया था जिसका उन्हें सारी जिंदगी दु;ख रहा। सन् 1938 के दिसंबर के उत्तरार्ध में केरेल को गुरदों में सूजन और फ्लू हुआ। जिसके चलते 25 दिसम्बर 1938 की शाम उनकी जिंदगी में आखिरी शाम बन कर आई।

रोबोट शब्द के इस तथा कथित जन्मदाता केरेल कैपेक को वस्तुतः एक प्रतिभावान 'विज्ञान कथा लेखक' माना जाना चाहिए हालांकि तब विज्ञान कथा को साहित्य की एक पृथक विधा की तरह वर्गीकृत नहीं किया गया था। अतः उनके विज्ञान कथा लेखन को 'प्रोटो साइंस फिक्शन' भी कहा जा सकता है। कुछ विद्वान उन्हें 'नॉन हार्डकोर यूरोपियन साइंस फिक्शन' के संस्थापकों में से एक मानते है। इस प्रकार के साइंस फिक्शन (विज्ञान कथा साहित्य) में विज्ञान के अति उन्नत आविष्कारों या स्पेस ट्रेवेल का विवरण तो नहीं होता है पर इसमें पृथ्वी पर मानवीय रिश्तों और संस्कृति के भविष्य दर्शन का पुट अवश्य रहता है। उनके लेखन में उस समय के चर्चित विज्ञान आविष्कारों के प्रति उनकी सामाजिक प्रतिबद्धता, साफ दिखाई पड़ती है। आणुविक आयुधों के अंधाधुंध निर्माण, मानवों के समान व्यवहार करने वाले यंत्रों यथा रोबोट्स या बुद्धिमान सेलामेडर्स के निर्माण के सामाजिक मूल्यों या उस समय के मानवों पर क्या दुष्प्रभाव होंगे, यह उनकी विज्ञान कथाओं की मूल चिंता है। विप्लवों, प्रातियों आपदाओं, डिक्टेटरशिप, बढ़ती हिंसा, बड़े

नाटक रूर का एक दृश्य जिसमें रोबोट विद्रोह कर देते हैं।

व्यावसायिक उपक्रमों (कारपोरेट्स) की बढ़ती शक्ति और समाज पर पकड़ से समाज पर होने वाले दुष्प्रभावों को भी उन्होंने अपनी रचनाओं का विषय बनाया है। उनकी रचनाएं इनके आगामी खतरों से सिर्फ आगाह ही नहीं करतीं अपितु इन विषम परिस्थितियों के बीच आम आदमी के लिए आशा की एक किरण भी दिखाती चलतीं हैं। इस सबके चलते उन्हें एक एक हार्डकोर विज्ञान कथा लेखक की बजाए अल्डुअस हक्सले (ब्रेव न्यूवर्ल्ड के लेखक) जार्ज ऑरवेल (1984 के लेखक) की तरह 'स्पेकुलेटिव फिक्शन लेखक' माना जाना चाहिए। हालांकि स्पेकुलेटिव फिक्शन एक तरह का साइंस फिक्शन ही है। पर इसको वर्गीकृत करने के मानदंड हार्डकोर सांइस फिक्शन की अपेक्षा कम सख्त होते हैं। केरेल कैपेक के लेखन ने उनके बाद के कुछ विज्ञान, कथाकारों को इस कदर प्रभावित किया कि उन्हें आज भी केरेल कैपेक का साहित्यिक उत्तराधिकारी माना जाना है। इनमें रे ब्रेडबरी, सलमान रुशदी, ब्रियान एल्डिस, डान सिमंड्स जैसे नाम भी है। इन विज्ञान कथाओं के अतिरिक्त कैपेक ने जासूसी कहानियां, सामाजिक उपन्यास, परी कथाएं, मंचीय नाटक एवम् बागवानी पर भी एक किताब लिखी है। रोसम्स यूनीवर्सल रोबेट्स (आर.यू.आर.) केरेल कैपेक को सबसे अधिक प्रसिद्धि, सन् 1920 में लिखे, उनके इस विज्ञान कथा नाटक से ही मिली जिसमें पहली बार प्रयुक्त शब्द 'रोबोट' ने इसे कालजयी बना दिया। तीन अंकों के इस नाटक के पहले अंक में एक बड़ी इंडस्ट्रियल कम्पनी के प्रेसीडेंट की पुत्री हेलेना एक छोटे द्वीप पर बनी एक फैक्ट्री 'रोसम्स यूनीवर्सल रोबोट्स' के भ्रमण पर आती है। वह यहां इस कंपनी के मुख्य प्रबंधक डोमिन से मिलती है जो उसे कम्पनी के इतिहास के बारे में बताता है। वह बताता है कि सन् 1920 में रोसम नाम का एक व्यक्ति इस आइलैंड पर समुद्री जैव विज्ञान (मरीन बायोलोजी) के अध्ययन हेतु आया था। बारह साल बाद यहां उसे एक विशेष प्रकार का रसायन हाथ लगा जो जैव कोशिका के अंदर पाए जाने वाले 'प्रोटोप्लाज्म' की तरह व्यवहार करता है। वह इस प्रोटोप्लाज्म से जीवधारी बनाने की जुगत में है पर उसके कई प्रयास नाकाम रहते है। एक दिन उसका भतीजा उसके पास आता है। प्रोटोप्लाज्म जैसे रसायन के उपयोग पर दोनों में बहस होती है। बड़ा रोसम तो सिर्फ कुत्ते या छोटे जानवर बनाना चाहता है ताकि उसकी 'एथिस्ट' सोच को बल मिल सके। वह यह कह सके कि जीवों बनाने में ईश्वर की कोई भूमिका नहीं है या फिर ईश्वर जैसी किसी सत्ता का कोई अस्तित्व ही नहीं है पर जूनियर रोसम को इसमें अपार संभावनाएं और अकूत धन-दौलत दिखती है। वह अपने चाचा सीनियर रोसम को उसकी फैक्ट्री में ही बंद कर के चला जाता है। बाहर जाकर वह बहुत सारी फैक्ट्रियां लगाता हैं जिनमें वह थोक के थोक यांत्रिक मानव या रोबोट्स बनाता है सन् 1950 व 1960 के बीच रोबोट्स का निर्माण इतना बढ़ता है कि दुनियाँ भर में हर काम के लिए सस्ते रोबोट्स आसानी से उपलब्ध होने लगते हैं। इससे रोजमर्रा के उपयोग में आने वाली चीजों के मूल्यों पर अविश्वसनीय ढंग से फर्क पड़ता है। रोबोट्स द्वारा निर्माण किए जाने के कारण ज्यादातर वस्तुओं के दाम अस्सी प्रतिशत तक गिर जाते हैं। हेलेना वहां कैब्री, डॉ. गाल, एलक्विस्ट और हॉलमियर से मिलकर उन्हें बताती है कि वह 'लीग ऑफ हयूमेनिटी' संगठन की प्रतिनिधि है जिसका उद्देश्य रोबोट्स को बंधुआ मजदूरी से मुक्ति दिलाना है। दूसरे वह यह भी मांग करती है कि रोबोट्स को उनकी मेहनत के बदले भुगतान भी किया जाना चाहिए ताकि वह अपनी मनपसंद चीजें खरीद सकें। कारखाने के मालिक, हेलेना के इस प्रस्ताव का मजाक उड़ाते हैं क्योंकि रोबोट्स की कोई पसंद-नापसंद है ही नहीं। डोमिन और हेलेना में प्यार हो जाता है और उनकी सगाई हो जाती है। नाटक के दूसरे अंक में इससे दस वर्ष बाद का दृश्य है। मानव की संतानोपत्ति की गति काफी धीमी हो गई है। डॉ. गाल अपने नए रोबोट प्रयोग 'रेडियस' के लिए एक अतिविकसित रोबोटेस 'रोबोट हेलेना' बनाते है। असली मानव हेलेना चोरी से रोबोट्स के निर्माण का फार्मूला प्राप्त करके उसे नष्ट कर देती है ताकि अब आगे और रोबोट्स न बनाए जा सकें। इसी अंक में रोबोट्स मानवों के लिखाफ विद्रोह कर देते हैं। जिससे निपटने के लिए यह सोचा जाता है कि रोबोट्स की सार्वभौमिक भाषा (सारे विश्व के रोबोट्स एक ही भाषा का प्रयोग करते है इसलिए यह यह सोचा गया कि वह कभी भी भाषा के स्तर पर एक हो सकते हैं।) मानव के अस्तित्व के लिए खतरा बन सकती है इसलिए अब ऐसे रोबोट्स का निर्माण किया जाना चाहिए जो सिर्फ अपने एक छोटे से ग्रुप की भाषा ही समझ सकें। तब हेलेना यह रोज खोलती है कि वह तो रोबोट्स के निर्माण का फार्मूला जला चुकी है। मानवों के नए प्रकार के रोबोट्स के निर्माण के इस प्रस्ताव से क्रोधित रोबोट्स सारी फैक्टरी पर अधिकार कर लेते है और

मानवों को मारना शुरू कर देते हैं। अंततः रोबोट्स पहले फैक्ट्री के, फिर आइलैंड के सारे मनुष्यों को मार देते हैं, सिवाय एलक्विस्ट के। रोबोट्स उसे अपने जैसा ही मानते है क्योंकि एलक्विस्ट भी अपने हाथों से रोबोट की तरह ही काम करता है। अंतिम और समापन अंक में कई साल बीत चुके हैं। पृथ्वी के सारे मानव, रोबोट्स द्वारा मारे जा चुके हैं। सिर्फ एलक्विस्ट बचा है। रोबोट्स उसे आदेश देते हैं कि वह रोबोट बनाने का फार्मूला फिर से खोजे जिस पर एलक्विस्ट उनसे किसी और जीवित मुनष्य को खोज कर लाने को कहता है पर अब तो पृथ्वी पर कोई मनुष्य बचा ही नहीं है। अंततः वह प्रस्ताव रखता है कि वह रोबोट्स को मार कर उनका शवोच्छेदन (पोस्टमॉर्टम) करके फार्मूला खोजने प्रयास कर सकता है। अधिकारी रोबोट्स उसे इसकी इजाजत दे देते हैं। अब एलिक्वस्ट इस की आड़ में रोबोट्स से मानवों की हत्याओं का बदला लेना शुरू कर देता है और रोबोट्स को लगातार मारता जाता है। अंत में उसे भी इस मार-काट से विरक्ति हो जाती है। रोबोट प्राइमस और रोबोटेस हेलेना दोनों में न जाने कैसे मानवोचित संवेदनाएं उत्पन्न हो गईं हैं। वह दोनों एक दूसरे से प्यार करने लगते हैं। जब एक बार एलक्विस्ट प्राइमस और हेलेना भी को मारने की धमकी देता है तो वे दोनों इसके लिए सहर्ष राजी हो जाते है पर उनकी शर्त है कि इसके बाद वह अन्य रोबोट्स को नहीं मारेगा। एलक्विस्ट इन रोबोट्स में मानवीय संवेदनाएं देख कर आश्चर्यचकित हो जाता ह'। वह सोचता है कि जब यह मानवों जैसे हो गए हैं तो हो सकता है यही आने वाली दुनिया का सृजन करने के लिए आदम और हव्वा साबित हों। अंततः वह उन्हें नहीं मारता है और बाकी दुनिया पर आधिपत्य करने के लिए उन्हें छोड़ देता है।

इस नाटक पर टिप्पणी करके हुए प्रख्यात विज्ञान कथा लेखक इसाक आसिमोव ने इसे बहुत घटिया तरीके से लिखी रचना बताया है (वैरी बैडली रिटिन) पर कहा कि इसमें रोबोट शब्द का पहली बार प्रयोग किया गया है इसीलिए यह कालजयी रचना बन गई है। आसिमोव का यह कथन उनकी अहमन्यता, अतिवादिता और उच्चता ग्रंथि का ही परिचायक है, नहीं तो एक ऐसे लेखक, जिसे नोन हार्डकोर यूरोपियन साइंस फिक्शन के संस्थापकों में से एक माना जाता हो, जिसको कई बार साहित्य के नोबेल पुरस्कार के लिए नामित किया जा चुका हो, (कैपेक को यह पुरूस्कार हिटलर की वजह से उपजे राजनैतिक कारणों से नहीं मिला था। स्वीडिश एकेडेमी केरेल को नोबेल पुरस्कार देने को राजी थी बशर्ते वह कुछ ऐसा लिख कर दे दें जो नाजियों और हिटलर के खिलाफ न हो पर कैपेक ने इसके लिए साफ मना कर दिया था।), उसके लेखन को घटिया ठहराने के पीछे आसिमोव की मंशा क्या हो सकती है? वैसे भी आसिमोव विज्ञान कथाओं के मसीहा भी नहीं हैं (कोई लेखक हो भी नहीं सकता) जो किसी विज्ञान कथा साहित्य को श्रेष्ठ होने का सर्टिफिकेट उनसे लेना जरूरी हो; पर इस विषय पर चर्चा फिर कभी।

drarvinddubey2004@gmail.com

रोबोट शब्द क्या सचमुच केरेल कैपेक की देन है?

नहीं, यह स्वीकोरोक्ति है 'रोबोट' शब्द के तथाकथित जन्मदाता केरेल कैपेक की। 'आक्सफोर्ड इंगलिश डिक्शनरी इटायमोलोजी' में छपे एक छोटे लेख में जब केरेल कैपेक को रोबोट शब्द का जन्मदाता बताया गया तो इसके स्पष्टीकरण में सन 1933 में केरेल कैपेक ने एक चेक भाषीय जर्नल 'लिदोव नोविनी' में लिखा कि वास्तव में वह तो इन यांत्रिक मानवों के लिए जर्मन भाषा के शब्द 'लेबर' के आधार पर इन्हें 'लेबोरी' नाम देना चाहते थे पर उन्हें खुद यह नाम पसंद नहीं था। इसलिए उन्होंने अपने भाई, जाने-माने लेखक और चित्रकार जोसेफ कैपेक से इस बारे में चर्चा की। जोसेफ ने ही उन्हें इसके लिए एक शब्द सुझाया 'रोबोटी', जो अंग्रेजी भाषा में रोबोट होता है। अतः इस शब्द की उत्पत्ति का श्रेय उन्हें नहीं जोसेफ कैपेक को दिया जाना चाहिए।

अतः जब भी 'रोबोट' शब्द की उत्पत्ति के बारे में चर्चा हो तो ध्यान रखिए यह शब्द साहित्य जगत को नाटक 'आर.यू. आर.' के लेखक केरेल कैपेक ने नहीं वरन उनके अग्रज, चित्रकार व लेखक जोसेफ कैपेक ने दिया था। हां रोबोट शब्द का इतनी प्रसिद्ध जगह प्रयोग करने व उसे सारी भाषाओं में प्रवेश दिलाने के लिए विज्ञान कथा साहित्य जगत केरेल कैपेक का सदैव आभारी रहेगा।

हम तारों के सूक्ष्म रहस्यों तथा ब्रह्माण्ड के विभिन्न पिण्डों के आकार, गति, स्थिति, आकृति इत्यादि के बारे में बिना दूरबीन की सहायता से नहीं जान सकते हैं। जब महान वैज्ञानिक गैलिलियो ने हैंस लिपर्शे द्वारा दूरबीन के आविष्कार के पश्चात् स्वयं दूरबीन का पुनर्निर्माण किया और पहली बार खगोलीय अवलोकन में उपयोग किया था, उस क्षण के पश्चात लगभग चार शताब्दियां बीत चुकी हैं। इन चार सौ वर्षों में बहुत से विशालकाय दूरबीनों का निर्माण पृथ्वी पर किया जा चुका हैं तथा कुछ दूरबीनें अन्तरिक्ष में स्थापित किए जा चुके हैं, इन्हीं दूरबीनों में से एक है हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन।

हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन के 25 वर्ष

प्रदीप कुमार

सदियों से ब्रह्माण्ड मानव को आकर्षित करता रहा है। इसी आकर्षण ने खगोल वैज्ञानिकों को ब्रह्माण्डीय प्रेक्षण और ब्रह्माण्ड अन्वेषण के लिए प्रेरित किया। रात के समय यदि हम आसमान में दिखाई देने वाले तारों का अवलोकन करते हैं, तो हमें दूरबीन के बिना भी कुछ बातें शीघ्र स्पष्ट होने लगती हैं। मगर, हम तारों के सूक्ष्म रहस्यों तथा ब्रह्माण्ड के विभिन्न पिण्डों के आकार, गति, स्थिति, आकृति इत्यादि के बारे में बिना दूरबीन की सहायता से नही जान सकतें हैं। जब महान वैज्ञानिक गैलिलियो ने हैंस लिपर्शे द्वारा दूरबीन के आविष्कार के पश्चात् स्वयं दूरबीन का पुनर्निर्माण किया और पहली बार खगोलीय अवलोकन में उपयोग किया था, उस क्षण के पश्चात् लगभग चार शताब्दियां बीत चुकी हैं। इन चार सौ वर्षों में बहुत से विशालकाय दूरबीनों का निर्माण पृथ्वी पर किया जा चुका है तथा कुछ दूरबीनें अन्तरिक्ष में स्थापित किए जा चुकें हैं, इन्हीं दूरबीनों में से एक है हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन (Hubble Space Telescope)। इसका प्रमोचन स्पेस शटल डिस्कवरी द्वारा 25 अप्रैल, 1990 में किया गया। अतः अमेरिकी अन्तरिक्ष संस्था नासा (NASA) तथा यूरोपीयन अन्तरिक्ष संस्था (ESA) वर्तमान में हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन के प्रमोचन के शानदार 25 वर्ष पूर्ण होने पर रजत जयंती मना रहा हैं। हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन विगत 25 अप्रैल, 2015 को हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन ने अपने शानदार पच्चीस वर्ष पूर्ण कर लिए हैं। हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन खगोलिकी एवं खगोलभौतिकी के क्षेत्र में क्रांतिकारी सिद्ध हुआ। हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन की महानतम उपलब्धियों ने उसे खगोलभौतिकी एवं खगोलकी के इतिहास में सर्वाधिक महत्वपूर्ण दूरबीन बना दिया है। सृष्टि के आरम्भ और आयु के सबंध में खगोलीय प्रेक्षण द्वारा प्रथम परिचय हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन ने ही करवाया है। दरअसल हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन हमसे बहुत दूर स्थित अधिनव तारा विस्फोटों (Supernova) को देखने में समर्थ हैं। इसका प्रमुख उद्देश्य हैं विभिन्न खगोलीय दूरियों का सटीक मापन करके हब्बल स्थिरांक (Hubble constant) का बिलकुल सटीक ऑकलन करना। आप सोच रहे होंगें कि आखिर ये हब्बल स्थिरांक क्या होता हैं? दरअसल एडविन पी. हब्बल ने 1929 में ब्रह्माण्ड के विस्तारित होने के पक्ष में प्रभावी तथा रोचक सिद्धांत रखा। हब्बल ने ही हमें बताया कि ब्रह्माण्ड में हमारी आकाशगंगा की तरह लाखों अन्य आकाशगंगाएं भी हैं। उन्होंने अपने प्रेक्षणों तथा डॉप्लर प्रभाव की सहायता से यह निष्कर्ष निकाला कि आकाशगंगाएं ब्रह्माण्ड में स्थिर नही हैं, जैसे-जैसे उनकी दूरी बढ़ती जाती है वैसे ही उनके दूर भागने की गति तेज़ होती जाती है। किसी आकाशगंगा के हमसे दूर जाने के मध्य का अनुपात हब्बल स्थिरांक से मिलता है। यदि हमे एक सटीक हब्बल स्थिरांक प्राप्त हो जाएगा तो हम ब्रह्माण्ड के वर्तमान,

भूत तथा भविष्य को जानने में सक्षम हो जायेंगें। हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन की सहायता से खगोलज्ञों ने पृथ्वी से दूर स्थित अत्यंत प्राचीन तारों के समूह को ढूंढ़ निकाला हैं। यह तारा समूह हमसे लगभग 7000 प्रकाशवर्ष हैं। इसके बुझते जाने के रफ्तार के आधार पर वैज्ञानिको ने ब्रह्माण्ड के आयु की हालिया गणना 13 से 14 वर्ष के बीच आंकी हैं। हो सकता हैं कि भविष्य में हब्बल स्थिरांक कुछ और हों, परन्तु ब्रह्माण्ड की जीवनगाथा हब्बल स्थिरांक की कलम से ही लिखी जाने वाली है।

इसी दूरबीन ने ही हमें श्याम उर्जा का ज्ञान दिया हैं। इसकी सहायता से खगोलज्ञों ने जब 1a प्रकार के सुदूरवर्ती अधिनवतारों का प्रेक्षण किया, जो खगोलीय दूरियों को मापने में सहायक होते हैं, तो उन्हें यह ज्ञात हुआ कि हमारा ब्रह्माण्ड न केवल विस्तारमान हैं, बल्कि इसके विस्तार की गति भी समय के साथ त्वरित होती जा रही हैं। श्याम उर्जा को इस त्वरण का उत्तरदायी माना जा रहा हैं। ब्रह्माण्ड का कुल 70 प्रतिशत भाग इसी ऊर्जा के रूप में हैं। दीर्घवृत्तीय आकाशगंगाओं की खोज, क्वासरों के विशिष्ट गुणों की खोज तथा वर्ष 1994 में बृहस्पति ग्रह और पुच्छल तारे 'शूमेकर लेवी-9' के बीच हुए टकराव का चित्रण हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन की विशिष्ट उपलब्धियों में सम्मिलित हैं। यह पहली अन्तरिक्ष दूरबीन हैं जो अल्ट्रावायलेट और इन्फ्रा-रेड के समीप कार्य करती हैं और सुग्राहकता के साथ खूबसूरत, मनमोहक एवं अद्‌भुत चित्रों को लेती हैं और पृथ्वी पर भेजती है। प्रमोचन तथा दुर्लभ खगोलकी प्रेक्षण की शुरुआत हब्बल दूरबीन एक अन्तरिक्ष आधारित दूरबीन होने के नाते, इसे अन्तरिक्ष में कृत्रिम उपग्रह के रूप में स्थापित किया गया है। इस दूरबीन को अमेरिकी अन्तरिक्ष संस्था नासा ने यूरोपीयन अन्तरिक्ष संस्था के पारस्परिक सहयोग से तैयार किया था। नासा ने हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन को अंतरिक्ष में स्थापित करने के लिए लगभग ढाई अरब डॉलर ख़र्च किए थे। पहले हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन को 1983 में प्रमोचित करने की योजना बनाईं गईं थी, परन्तु कुछ तकनीकी खामियों तथा बजट में देरी के कारण इस पारस्परिक सहयोगी कार्यक्रम में सात साल की देरी हो गई। इसे 25 अप्रैल, 1990 को अमेरिकी स्पेस शटल 'डिस्कवरी' के उड़ान एस. टी.एस.-31 की सहायता से इसको इसकी कक्षा में स्थापित किया गया। इस अन्तरिक्ष आधारित दूरबीन को खगोलज्ञ 'एडविन पॉवेल हब्बल' के सम्मान में हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन का नाम दिया गया। यह दूरबीन अभी 600 किलोमीटर की ऊँचाई पर पृथ्वी के कक्षा के चक्कर काट रही हैं। पृथ्वी की एक चक्कर लगाने में इसे 100 मिनट लगते हैं। इस दूरबीन का निर्माण कार्य 1970 में ही आरम्भ हो चुका था तथा बाल्टिमोर, अमेरिका के स्पेस टेलीस्कोप साइंस इंस्टीट्यूट में हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन को पूरी तरह से विकसित किया गया। इसके निर्माण से पहलें इसके आकार-प्रकार के बारे में कहीं ज्यादा ही विशाल कल्पना की गईं थी, परन्तु अंततः यह मात्र

13.2 मीटर की लम्बाई और अधिकतम 4.2 मीटर व्यास वाली दूरबीन साबित हुई। पृथ्वी के वायुमंडल से पूर्णतया मुक्त, अन्तरिक्ष में होने के कारण यह पृथ्वी पर उपस्थित विशाल दूरबीनों जैसे- 'साल्ट', 'जी.सी.टी.', 'बी.एल.टी.' इत्यादि से कहीं अधिक महत्वपूर्ण साबित हुआ हैं। इसने खगोलकी से संबंधित कई मौलिक समस्याओं को समझने में खगोलज्ञों की सहायता की है। दिलचस्प बात यह है कि इसके द्वारा प्राप्त आकड़ों के आधार पर 3000 से अधिक शोध पत्र प्रकाशित किए जा चुके हैं। हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन में 2.4 मीटर (94.5 इंच) के दर्पण का उपयोग किया गया हैं। इसका भार 11,110 किलोग्राम है। यह प्रतिदिन पृथ्वी पर 12 से 15 गीगाबाइट आंकड़े भेजती है, जोकि एक विशाल डाटा है। अन्तरिक्ष में सर्विसिंग हब्बल दूरबीन प्रथम ऐसी अन्तरिक्ष दूरबीन है जिसे अन्तरिक्ष में रिपेयर (सर्विसिंग) किया जा सकता है। वर्ष 1990 में इसे प्रमोचित करने के पश्चात् वैज्ञानिको ने पाया कि इसके मुख्य दर्पण में कुछ खामी रह गई है, जिससे वह पूरी क्षमता के साथ कार्य नही कर पा रही है। अतः दिसंबर 1993 को वैज्ञानिकों की एक टीम भेजी गई तथा उन्होंने मुख्य दर्पण को रिपेयर कर दिया। इसके बाद क्रमशः चार बार इसकी सर्विसिंग की जा चुकी हैं-फरवरी 1997, दिसंबर 1999, फरवरी 2002 और सबसे ताजा रिपेयरिंग मई 2009 में की गई। वर्ष 2009 के सर्विसिंग के अभियान में वैज्ञानिकों ने इसके उष्मा कवच और निर्देशक सेंसर को बदला। इसमें स्पेक्ट्रोग्राफ, इमेजर, बैटरीज और गाइरोस्कोप इत्यादि उपकरण लगाए गए। जब इसको प्रमोचित किया गया था, तब इसकी आयु 10 वर्ष आंकी गईं थी। मतलब 2010 तक इसको कार्य करना चाहिए था, परन्तु इसके नियमित रिपेयरिंग और सर्विसिंग के कारण यह प्रथम ऐसी अन्तरिक्ष दूरबीन बन गई है जिसने इतने लम्बे समय तक कार्य किया है तथा 2009 के रिपेयरिंग के बाद आशा है कि 2020 तक कार्य करता रहेगा। वर्ल्ड वाइड टेलिस्कोप (worldwidetelescope.org) नामक वेबसाइट पर जाकर आप सीधे हब्बल अन्तरिक्ष दूरबीन से अन्तरिक्ष का लाइव व्यू देख सकते हैं। आप चाहें तो इसके एप्लीकेशन को अपने कम्प्यूटर पर डाउनलोड भी कर सकते हैं।

pk110043@gmail-com

सिलिकोसिस

धूल कणों से फैलता रोग

सचिन नरवड़िया

सिलिकोसिस नाम का सर्वप्रथम प्रयोग 1870 में अचिले विस्कोन्ती (जो की एक वकील थे) ने किया था। इस रोग के इतिहास पर नज़र डालें तो यह पता चलता है कि 16वीं शताब्दी में अग्रिकोला ने लिखा था कि यूरोप के कर्पेथेइओन नामक पर्वत की खदानों में कई महिलाओं ने 7–7 पतियों से शादी की और वे सभी पुरुष सिलिको–तपेदिक के कारण कम उम्र में मर गए थे। उत्तरी थाइलैंड में एक पूरे गाँव को विधवाओं का गाँव कहा जाता है, क्योंकि वहां पर काफी लोग इस बीमारी की वजह से मर गए थे।

यह कल्पना करना कितना असहज कर देता है कि कोई रोग व्यवसाय से सम्बंधित होता है। लेकिन यह सच है 'सिलिकोसिस' नामक रोग व्यवसाय से सम्बधित होता है जो कि धूल में मौजूद सिलिका के कणों के कारण मनुष्यों में हो सकता है। भले ही इस रोग के बारे में आज बात की जा रही हो परन्तु यह रोग अत्यंत पुराना है। यह रोग क्षेत्र विशेष में नहीं सिमटा होता है, बल्कि यह पूरे विश्व में व्याप्त है और हर साल इसके चलते हजारों लोगों की जानें जाती हैं।

सिलिकोसिस पुरातन समय से अनेक नामों से जाना गया है, जिसमें मायानेर्स थेसिस, ग्राइंडरस अस्थमा, पॉटर्स रॉट कुछ प्रमुख नाम हैं। यह फेफड़ों से जुड़ा एक रोग होता है। सिलिकोसिस नाम का सर्वप्रथम प्रयोग 1870 में अचिले विस्कोन्ती (जो की एक वकील थे) ने किया था। इस रोग के इतिहास पर नज़र डालें तो यह पता चलता है कि 16वीं शताब्दी में अग्रिकोला ने लिखा था कि यूरोप के कर्पेथेइओन नामक पर्वत की खदानों में कई महिलाओं ने 7-7 पतियों से शादी की और वे सभी पुरुष सिलिकोसिस–तपेदिक के कारण कम उम्र में मर गए थे। उत्तरी थाइलैंड में एक पूरे गाँव को विधवाओं का गाँव कहा जाता है, क्योंकि वहां पर काफी लोग इस बीमारी की वजह से मर गए थे। सिलिकोसिस फेफड़ों की एक लाइलाज बीमारी है, जो धूल में मौजूद मुक्त सिलिका के कणों को अंतःश्वसन करने के कारण होती है। यह बीमारी होने के बाद इसमें सुधार होने की संभावना नहीं रहती मगर इस रोग पर नियंत्रण पाया जा सकता है। यह रोग सिलिका मिश्रित धूल के संपर्क के कारण होता है। इसलिए व्यक्ति जितने लम्बे समय तक सिलिका मिश्रित धूल के संपर्क में रहता है, उतना ही अधिक इस रोग के चपेट में आता है। इस रोग से वे लोग अधिक प्रभावित होते हैं जो सिलिका मिश्रित धूल के संपर्क में आते हैं और ऐसा तभी होता है जब उनका कार्य स्थल ऐसा हो, जहाँ पर उन्हें चट्टानों को तोड़ना हो, रेत एकत्रित करना हो, पत्थर, अयस्क आदि को तोड़ना या बारीक चूरा करना शामिल होता है। इन सभी कार्यों में सिलिका उत्सर्जित होती है। इसके अतिरिक्त खदानों, कांच के कारखानों, मृत्तिका आदि जगहों पर होने वाले कार्यों में भी सिलिका मिश्रित धूल के कणों के संपर्क में आते हैं।

बालू विस्फोट एक सबसे खतरनाक प्रक्रिया है, जिसमें सिलिकोसिस होने का सबसे अधिक खतरा रहता है। तीव्र विस्फोट में अगर निकलने वाले मलबे में सिलिका हो तो सिलिकोसिस होने की संभावना रहती है। सूखी खुदाई, रेत या कंक्रीट को साफ़ करना, दबाव में वायु का प्रयोग आदि जैसी प्रक्रियाएं धूल के बादलों का निर्माण करते हैं। ये धूल के बादल श्वसन से फेफड़ों तक

सिलिका पहुँचाने में सहायक होते हैं। सिलिका के 3 स्वरूप होते हैं - स्फटिक, सूक्ष्म स्फटिक और अक्रिस्टली। मुक्त सिलिका शुद्ध सिलिकोन डाइऑक्साइड होता है।

सिलिकोसिस के कारण फेफड़ों में तन्तुमयता और वातस्फिति होती है। सिलिकोसिस का प्रकार और उसकी उग्रता इस बात पर निर्भर करती है कि सिलिका के संपर्क में रोगी कितने समय तक रहा है। सिलिकोसिस जीर्ण, त्वरित और तीक्ष्ण आदि रूप में पहचाना जाता हैं। इस रोग में संकटमय स्थिति असमर्थता और मृत्यु के रूप में प्रकट होती हैं। अक्सर सिलिकोसिस से मौत का कारण सिलिकोसिस के साथ फेफड़ो का तपेदिक होता है और इसे सिलिको-तपेदिक कहते हैं। श्वसन के कार्यों की क्षमता में कमी बड़े पैमाने पर तन्तुमयता और वातस्फिति होने से होती है। इसके साथ कभी-कभी दिल का दौरा भी मौत का कारण बनता है।

हमारे देश में राष्ट्रीय खनिक स्वास्थ्य संस्थान सिलोकोसिस के रोगियों की पहचान और रोग का निदान करने में अग्रणी भूमिका निभा रहा है। हाल ही में इस संस्थान ने राजस्थान के करौली जिले में 101 लोगों की जांच में पाया कि उनमें से 78.5% लोग सिलोकोसिस पॉजिटिव थे। माइन लेबर प्रोटेक्शन काम्पैग्न ट्रस्ट ने भी जोधपुर में 987 सिलोकोसिस पॉजिटिव मामलों को चिहांकित किया था। सिलोकोसिस का शीघ्र निदान कर पाना डाक्टरों के लिए कठिनाई का विषय होता है, क्योंकि इसके लिए उन्हें प्रशिक्षण और विशिष्टता की जरुरत होती है और सिलिकोसिस के लक्षण तपेदिक से बहुत ज्यादा मिलते-जुलते होने से गलत निदान होने की संभावना बनी रहती है।

सिलिकोसिस की रोकथाम के लिए नियोक्ता द्वारा किये जाने वाले उपाय -

●वायु में स्फटिक सिलिका की नियमित जांच करना जिसके संपर्क में खनिक रहते हैं।

●स्फटिक सिलिका के संपर्क को कम करने के लिए गीली खुदाई करवाना, सिलिका के निकास के लिए स्थानीय खुलाव करना तथा धूल के उत्सर्जन को कम करना।

●कर्मचारियों को सुरक्षात्मक कपड़े, मास्क, फव्वारे आदि मुहैया कराना।

●कर्मचारियों को सिलिका और उसके स्वास्थ्य पर होने वाले खतरे से आगाह करना।

●कर्मचारियों को सुरक्षा के सामान के सही उपयोग हेतु प्रशिक्षण देना।

●निर्देश चिन्हों का प्रयोग करना जिससे कर्मचारियों को सिलिका और उसके जोखिम से अवगत कराना।

●समय-समय पर कर्मचारियों की स्वास्थ्य जांच करवाना। सारे सिलिकोसिस पॉजिटिव मामलों की सूचना स्वास्थ्य विभाग को देना।

सिलिकोसिस का प्रकार और उसकी उग्रता इस बात पर निर्भर करती है कि सिलिका के संपर्क में रोगी कितने समय तक रहा है। सिलिकोसिस जीर्ण, त्वरित और तीक्ष्ण आदि रूप में पहचाना जाता हैं। इस रोग में संकटमय स्थिति असमर्थता और मृत्यु के रूप में प्रकट होती हैं। अक्सर सिलिकोसिस से मौत का कारण सिलिकोसिस के साथ फेफड़ो का तपेदिक होता है और इसे सिलिको-तपेदिक कहते हैं।

इन उपायों को यदि हर नियोक्ता अपनाये तो हम सब मिलकर इस खतरनाक रोग को अपने समाज से दूर हटा पाएंगे और एक स्वस्थ समाज के निर्माण में अपनी भूमिका का निर्वहन कर सकेंगे।

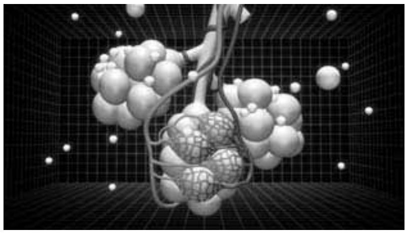

sachin@vigyanprasar.gov.in

एलियन्स को भेजेंगे संदेश

मुकुल व्यास

कुछ वैज्ञानिकों का कहना है कि हमें सौरमंडल से बाहर दूसरे तारों के आवास क्षेत्रों में स्थित ग्रहों की तरफ संदेश भेजना शुरू कर देना चाहिए ताकि पारलौकिक जीव हमारी बात सुन सकें। पारलौकिक जीवन की खोज से जुड़े सेटी प्रोजेक्ट के विशेषज्ञों का विचार है कि अब हमें दूसरे लोक में बुद्धिमान सभ्यताओं के संकेतों के लिए बाहरी रेडियो संदेशों को सुनना बंद कर देना चाहिए। गौरतलब है कि ब्रह्मांड से आने वाले संदेशो को सुनने के लिए सेटी का गठन किया गया था। हार्वर्ड यूनिवर्सिटी और कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी जैसे संस्थानों के खगोल-भौतिकविद इस प्रोजेक्ट में शामिल हुए। सेटी इंस्टीट्यूट के एक वैज्ञानिक डगलस वकोच का कहना है कि हमें अब दूसरे सौरमंडलों के 'गोल्डीलॉक्स' क्षेत्रों में स्थित ग्रहों को उपयुक्त संदेश भेजने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। गोल्डीलॉक्स क्षेत्र ऐसा क्षेत्र है जहां तापमान जीवन के लिए उपयुक्त होता है। उन्होंने कहा कि पिछले पचास वर्षों से खगोल वैज्ञानिक इरादतन रेडियो संकेतों की तलाश कर रहे हैं ताकि दूसरी सभ्यताओं के बारे में कोई सुराग हाथ लग जाए। अब दूसरी अर्द्ध शती में प्रवेश करते हुए हमें अपनी रणनीति बदल देनी चाहिए। चुपचाप रेडियो संदेशों को सुनने के बजाए हमें बाहरी दुनिया की तरफ इरादतन सूचना प्रधान संदेश संप्रेषित करने चाहिए। दूसरे तारों के आवास योग्य क्षेत्रों में पृथ्वी जैसे ग्रह दिखने के बाद हमें संप्रेषण योजनाओं के लिए कुदरती लक्ष्य मिल गए हैं। वकोच ने कहा कि हमें कई महीनों या कई वर्षों तक तारों के एक समूह विशेष लक्षित करना होगा। नासा के केप्लर स्पेस टेलीस्कोप ने तारों के आवास योग्य क्षेत्रों में 3800 से अधिक ग्रहों का पता लगाया है। ऑस्ट्रेलियन नेशनल यूनिवर्सिटी के रिसर्चरों ने ताजा अध्ययन में पता लगाया है कि हमारी आकाशगंगा में अरबों ग्रहों पर परिस्थितियां पानी और जीवन के लिए अनुकूल हो सकती हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि नए खोजे गए ग्रहों की तरफ संकेत भेजना नई दुनिया से संपर्क करने का सबसे अच्छा तरीका हो सकता है।

पारलौकिक जीवों को किस तरह के संदेश भेजे जाएं, इस पर वैज्ञानिकों की एक राय नहीं है। लोग एलियंस से क्या कहना चाहेंगे, यह जानने के लिए सेटी ने 'अर्थ स्पीक्स' नामक एक साइट स्थापित की है। इस साइट पर लोगों से अंतर-नक्षत्रीय संदेशो का प्रारूप भेजने को कहा गया है। साइट पर भेजे गए संदेशों में महिलाओं ने जहाँ दोस्ती, कॉफी और बिस्कुट आदि की पेशकश की वहीं पुरुषों ने विज्ञान और पारलौकिक सभ्यता के बारे में जानकारी चाही। संदेशों में पृथ्वी के ज्ञान को थोपने के बजाय मुख्य जोर एलियंस से मदद मांगने पर दिया गया। वकोच का कहना है कि मनुष्य 'ब्रह्मांडीय हीन भावना' का शिकार है। वह यह मान कर चलता है कि पारलौकिक जीव तकनीकी दृष्टि से हम से ज्यादा उन्नत हैं और उनके समक्ष हम से सीखने के लिए कुछ भी नहीं है। उन्होंने साथ ही यह भी कहा कि मानव जाति के पास अनुभवों का विपुल खजाना है। दूसरी सभ्यताएं इसकी कल्पना भी नहीं कर सकती। पारलौकिक जीव तकनीकी दृष्टि से भले ही हम से बहुत आगे हों लेकिन वे कभी मानवीय नहीं हो सकते। हम अपने अंतर नक्षत्रीय संदेशों में इंसानी अनुभवों पर ही जोर देना चाहेंगे।

सेटी के विशेषज्ञों का कहना है कि सरकारों को मिल कर परग्रही प्राणियों के लिए संदेश निर्धारित चाहिए। बुनियादी संदेश भेजने के लिए उपकरण पहले से मौजूद हैं और कुछ वैज्ञानिकों का कहना है कि संदेश भेजने की अनिच्छा के पीछे राजनीतिक कारण हैं। इसका तकनीक से कोई लेना देना नहीं है। वरिष्ठ खगोल वैज्ञानिक और सेटी रिसर्च सेंटर के निदेशक सेठ शोष्टक के अनुसार कुछ लोग एलियंस से संपर्क करने के विचार का विरोध कर रहे हैं। उन्हें डर है कि इससे खतरनाक पारलौकिक जातियां हमारी उपस्थिति के बारे में सचेत हो जाएंगी। शोष्टक का कहना है कि संदेश भेजने मात्र से पृथ्वी के संकट में पड़ने की आशंका निराधार है। हम पिछले 70 सालों से अंतरिक्ष में अपने प्रसारण भेज रहे हैं। इनमे टेलीविजन, एफएम और रेडार संकेत शामिल हैं। पृथ्वी पर जीवन का अस्तित्व चार अरब साल से है और किसी ने भी अभी तक इसे नष्ट करने के बारे में नहीं सोचा। अतः हमें आशावादी होना चाहिए। दूसरी तरफ अमेरिकी वैज्ञानिक डेविड ब्रिन का मानना है कि पारलौकिक दुनिया से संपर्क करने की कोशिश एक बड़ी भूल होगी। उन्होंने कहा कि हम समस्त ब्रह्मांड की तकनीक संपन्न जातियों में सबसे युवा हैं। इसलिए हमें सजग रहना चाहिए।

mukul.vyas@gmail.com

ऐतिहासिक

शल्य चिकित्सा के जनक धन्वंतरि

शुकदेव प्रसाद

हम भारतवासियों को इस बात का गर्व है कि जो शल्य प्रक्रिया विगत शती में संसार के अन्य राष्ट्रों में पनपी, वह इस भूमि में आज से कोई दो हजार साल पहले ही जन्म ले चुकी थी और उसका व्यापक चलन था। चरक की भांति सुश्रुत की ख्याति भी देश की सीमा से बाहर खूब फैली। 9वीं और 10वीं शती में पूर्व में कंबोडिया और पश्चिम में अरब तक सुश्रुत और उनकी संहिता चर्चित हो चली थी।

भारत का चिकित्सा शास्त्र संबंधी ज्ञान अति प्राचीन है। भारत भूमि में दो प्रकार के आयुर्विज्ञानीय ग्रंथ रचे गए। एक में काय चिकित्सा (Physical therapy) का वर्णन था, जिसे आज 'चरक संहिता' नाम से जाना जाता है तथा दूसरे में शल्य क्रिया (Surgery) का वर्णन किया गया था। इसे 'सुश्रुत संहिता' नाम से जाना जाता है। अतिप्राचीन युग में भी हमारी चिकित्सा प्रणाली का उद्देश्य इतना व्यापक था, पद्धति इतनी परिपूर्ण थी कि 'चरक संहिता' केवल भारत में ही नहीं, अपितु विदेशों में भी लोकप्रिय हुई और इसकी महत्ता को स्वीकार करते हुए आज भी पाश्चात्य विद्वान मानते हैं कि चरक-सुश्रुत के काल में भारतीय चिकित्सा पद्धति पश्चिमी औषध विज्ञान से कहीं आगे थी।

हम भारतवासियों को इस बात का गर्व है कि जो शल्य प्रक्रिया विगत शती में संसार के अन्य राष्ट्रों में पनपी, वह इस भूमि में आज से कोई दो हजार साल पहले ही जन्म ले चुकी थी और उसका व्यापक चलन था। चरक की भांति सुश्रुत की ख्याति भी देश की सीमा से बाहर खूब फैली। 9वीं और 10वीं शती में पूर्व में कंबोडिया और पश्चिम में अरब तक सुश्रुत और उनकी संहिता चर्चित हो चली थी। आइए, प्राचीन भारत में चिकित्सा विज्ञान ;डमकपबंस बपमदबमद्ध के विकास की भूली-बिसरी कड़ियां जोड़ें।

धन्वंतरि : शल्य चिकित्सा के जनक

भारत का चिकित्सा विज्ञान विषयक ज्ञान अति प्राचीन है। कहा जाता है कि ब्रह्मा ने इस ज्ञान को जन्म दिया। ब्रह्मा से दक्ष प्रजापति ने यह ज्ञान अर्जित किया और देव भिषज अश्विनी कुमारों को प्रदत्त किया। अश्विनी कुमारों से इंद्र ने यह ज्ञान प्राप्त किया। जब रोगों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई तो चिंतित होकर महान ऋषियों ने हिमालय की पवित्र तलहटी में सभा की और रोगों से मुक्त होने के लिए ऋषि भरद्वाज को यह विद्या सीखने के लिए इंद्र के पास भेजा। ऋषि भरद्वाज ने यह ज्ञान अपने शिष्य आत्रेय पुनर्वसु को दिया। आत्रेय के शिष्यों ने अपने-अपने आयुर्वेदीय ग्रंथ रचे। आरंभ में दो प्रकार के आयुर्विज्ञान (Life Science) विषयक ग्रंथ रचे गए। एक में काय-चिकित्सा (औषधि एवं उपचार से रोग चिकित्सा) का वर्णन था, इसे आज 'चरक संहिता' के नाम से जाना जाता है तथा दूसरे में शल्य चिकित्सा (यंत्रों के प्रयोग से रोगोपचार) का वर्णन किया गया है, इसे 'सुश्रुत संहिता' कहते हैं।

'चरक संहिता' तो आत्रेय के उपदेशों पर आधारित है परंतु 'सुश्रुत संहिता' में उपदेष्टा हैं - धन्वंतरि और श्रोता हैं - सुश्रुत। शल्य कर्म के प्रवर्तक धन्वंतरि के नाम पर शल्य क्रिया करने वालों को 'धन्वंतरि' कहा जाता था। यों वेदों में धन्वंतरि का उल्लेख नहीं मिलता परंतु वे

शास्त्रीय चिकित्सा पद्धति में देव स्वरुप माने जाते हैं और आज भी पर्याप्त श्रद्धा से उनका नाम लिया जाता है। आज भी आयुर्वेद में निष्णात विद्वान् को 'धन्वंतरि' उपाधि से विभूषित किया जाता है।

सुश्रुत संहिता के अनुसार धन्वंतरि काशी के राजा थे और इन्हें दिवोदास के नाम से जाना जाता था। पौराणिक आख्यानों के अनुसार समुद्र मंथन में मिले चौदह रत्नों में धन्वंतरि भी एक थे। धन्वंतरि को ब्रह्मांड के प्रपालक विष्णु का एक अंश और मृत्यु-देवता को विजित करने वाले शिव का शिष्य माना जाता है। उनमें दीर्घाष्यु प्राप्त करने तथा रोगों पर नियंत्रण करने वाले दोनों ज्ञानों का संयोग पाया जाता है। सुश्रुत के उपदेष्टा हैं धन्वंतरि। एक प्रसंग देखिए।

सुश्रुत के नेतृत्व में ऋषियों का दल धन्वंतरि के आश्रम में पहुंचता है। सुश्रुत सादर उनसे निवेदन करते हैं – 'हम देख रहे हैं कि मनुष्य अपने शरीर एवं मस्तिष्क के रोगों के कारण पीड़ा भोग रहे हैं। बाहर से प्रवेश करने वाले उन्हीं के शरीर के भीतर से उठने वाले रोगों के कारण लोग निरुत्साहित दिखाई पड़ते हैं। इस दृश्य से हमें कष्ट होता है। प्राणि मात्र के हेतु हम सभी आपसे आपके परम पावन 'आयुर्वेद' के ज्ञान को सुनने आये हैं। हमें शिक्षा दीजिए जिसके द्वारा हम स्वास्थ्य के इच्छुक व्यक्तियों के रोगों का उपचार करना सीख जाएं तथा जिससे दीर्घायु भी प्राप्त कर सकें।' प्रति उत्तर में धन्वंतरि ने कहा – 'मेरे बच्चों! तुम सबका स्वागत है। तुम सब बिना किसी परीक्षा के ही मेरी शिक्षा ग्रहण करने योग्य हो। मैं तुम्हें तथ्य, ज्ञान, सिद्धांत और अनुरूपता के आधार पर शल्य तंत्र के विज्ञान की शिक्षा दूंगा। ध्यान से सुनो।'

इस प्रकार धन्वंतरि के उपदेशों के आधार पर आयुर्वेद के महान ग्रंथ 'सुश्रुत संहिता' की रचना हुई जो भारत में शल्य चिकित्सा का आदि ग्रंथ है। वाग्भट ने इस ज्ञान को आगे बढ़ाया।

आधुनिक प्लास्टिक सर्जरी के विधि विधान को देखते हुए धन्वंतरि द्वारा प्रतिपादित शल्य चिकित्सा उसकी समानार्थी है। आज जो ज्ञान बीसवीं शती में संसार में पनपा, वही ज्ञान हम भारतीयों को आज से 2,000 साल पहले भी मालूम था। इस बात के लिए हर भारतीय को गर्व होना चाहिए। यों पाश्चात्य जगत में शल्य चिकित्सा बहुत उन्नति कर चुकी है लेकिन आज से दो हजार साल पूर्व के काल का अनुमान किया जाय तो सुश्रुत संहिता में वर्णित शल्य कर्म बहुत ही परिपूर्ण एवं उन्नत लगता है।

भरद्वाज : आयुर्वेद के प्रथम शिक्षक

चरक संहिता तथा अन्य उपलब्ध स्रोतों के अनुसार भरद्वाज पहले ऋषि थे जिन्होंने आयुर्वेदीय चिकित्सा पद्धति का ज्ञान अर्जित किया। चरक संहिता में बताया गया है कि जब आर्यों के जीवन में रोग विघ्न डालने लगे तो ऋषियों को बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने हिमालय के पार्श्व में अनेक ऋषियों की सभा की और निश्चय किया कि रोगों से त्राण पाने के लिए इंद्र के पास चलना चाहिए और उनसे आयुर्विज्ञान का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। भरद्वाज को ऋषियों ने अपना प्रतिनिधि चुना और एकमत से उन्हें इन्द्र के पास ज्ञानार्जन के लिए भेजा गया। इंद्र भरद्वाज की विद्वता से प्रभावित थे। अतः उन्होंने थोड़े से शब्दों में आयुर्वेद का ज्ञान भरद्वाज को प्रदान किया। फिर भरद्वाज ने अपनी एकनिष्ठा से इस शास्त्र का पूर्ण ज्ञान अर्जित किया।

भरद्वाज ने इस ज्ञान को आत्रेय पुनर्वसु को दिया। भरद्वाज ने उन्हें रोगों के कारणों एवं

सुश्रुत के नेतृत्व में ऋषियों का दल धन्वंतरि के आश्रम में पहुंचता है। सुश्रुत सादर उनसे निवेदन करते हैं – 'हम देख रहे हैं कि मनुष्य अपने शरीर एवं मस्तिष्क के रोगों के कारण पीड़ा भोग रहे हैं। बाहर से प्रवेश करने वाले उन्हीं के शरीर के भीतर से उठने वाले रोगों के कारण लोग निरुत्साहित दिखाई पड़ते हैं। इस दृश्य से हमें कष्ट होता है। प्राणि माि के हेतु हम सभी आपसे आपके परम पावन 'आयुर्वेद' के ज्ञान को सुनने आये हैं। हमें शिक्षा दीजिए जिसके द्वारा हम स्वास्थ्य के इच्छुक व्यक्तियों के रोगों का उपचार करना सीख जायं तथा जिससे दीर्घायु भी प्राप्त कर सकें।' प्रति उत्तर में धन्वंतरि ने कहा – 'मेरे बच्चों! तुम सबका स्वागत है। तुम सब बिना किसी परीक्षा के ही मेरी शिक्षा ग्रहण करने योग्य हो। मैं तुम्हें तथ्य, ज्ञान, सिद्धांत और अनुरूपता के आधार पर शल्य तंाि के विज्ञान की शिक्षा दूंगा।

लक्षणों, पदार्थों के सामान्य एवं विशिष्ट स्वभाव, उनके गुण एवं क्रियाओं के बारे में शिक्षा दी। कालांतर में यह ज्ञान आत्रेय-पुनर्वसु ने अपने 6 शिष्यों - अग्निवेश, भेल, जतूकर्ण, पराशर, हारीत और क्षारपाणि को दिया, जिन्होंने आयुर्वेद के अपने-अपने स्वतंत्र ग्रंथ रचे। काय चिकित्सा में इंद्र के बाद भरद्वाज का नाम आता है और शल्य चिकित्सा में इंद्र के बाद धन्वंतरि का नाम आता है। अतः भरद्वाज एवं धन्वंतरि को आद्य गुरु माना जाता है जिन्होंने आयुर्वेद की दीक्षा परवर्ती ऋषियों को दी।

चरक संहिता में थोड़ा सा प्रकाश भरद्वाज पर डाला गया है। चूंकि इसकी रचना ई. पू. 800 के आस-पास मानी जाती है, अतः भरद्वाज को इससे पूर्व का माना जाना चाहिए। यह अनुमान ही है और इससे अधिक भरद्वाज के बारे में कुछ भी पता नहीं चलता। कुछ लोग उन्हें अथर्वांगरिस ऋषि का वंशज मानते हैं। भरद्वाज के बारे में एक पौराणिक कथा विष्णु पुराण और महाभारत में मिलती है। कहा जाता है कि उत्थय की पत्नी ममाता जब गर्भवती थी तो उसके देवर बृहस्पति ने उसके साथ संसर्ग किया। गर्भ के भ्रूण (बाद में दीर्घात्मा ऋषि) ने आपत्ति की और नए भ्रूण को पैर से बाहर धकेल दिया। बृहस्पति के क्रोध का पारावार न रहा, अतः उसने दीर्घात्मा (पहले भ्रूण) को अंधा कर दिया। बाहर आ गया भ्रूण जीवित बच गया था, बाद में अपने बच्चों से असंतुष्ट राजा पौरव ने उसे गोद ले लिया। यही गोद लिया बच्चा आगे चलकर भरद्वाज नाम से विख्यात हुआ।

महर्षि आत्रेय : काय चिकित्सा के उपदेष्टा

हम जान चुके हैं कि आयुर्वेद का ज्ञान ब्रह्मा से क्रमशः दक्ष प्रजापति, अश्विनी कुमारों और इंद्र को मिला। इंद्र ने भरद्वाज को यह ज्ञान दिया। भरद्वाज ने यह विद्या अन्य ऋषियों को सिखाई। इन्हीं ऋषियों में एक थे - पुनर्वसु जिन्हें आत्रेय भी कहा जाता है। ये अत्रि के पुत्र थे, अतः आत्रेय नाम से भी इन्हें स्मरण किया जाता है।

महर्षि आत्रेय का काल ईसा पूर्व की 8वीं शती माना जाता है। उन्होंने स्वयं आत्रेय संहिता की रचना की। इसके प्रारंभिक अध्याय में आत्रेय एवं उनके शिष्यों के बीच हुई वार्ता का विवरण है जिसमें उन्होंने अपने शिष्यों को बताया कि - 'संपूर्ण आयुर्वेदिक चिकित्सा शास्त्र का पूर्ण ज्ञान मनुष्य अपने पूरे जीवन काल में नहीं प्राप्त कर सकता। अतः तुम्हें मेरे एक अन्य छोटे से ग्रंथ से विद्या प्राप्त करके ही संतुष्ट हो जाना चाहिए।'

आत्रेय ने रोगों को कई वर्गों में बांटा है - साध्य रोग, असाध्य रोग, तंत्र-मंत्र द्वारा साध्य रोग, तथा वे रोग जिनके उपचार की संभावना बहुत कम होती है। आत्रेय संहिता में जल चिकित्सा का भी वर्णन मिलता है। आत्रेय ने नैतिक कारणों का भी विवेचन किया है। ज्वर, अतिसार, पेचिश, रक्तचाप आदि के उपचार की विशेष चर्चा आत्रेय ने की है। इतना ही नहीं, इस ग्रंथ में विषों के प्रतिकारकों का प्रचुर उल्लेख मिलता है। आयुर्वेद में महर्षि आत्रेय का वही स्थान है जो यूनानी चिकित्सा में हिपोक्रेटीस का। आत्रेय सामाजिक भ्रांतियों एवं रूढ़ियों के कट्टर विरोधी थे। एक उदाहरण पर्याप्त होगा। अपने यहां और बाहर भी पागलपन को देवताओं, राक्षसों के प्रकोप का प्रभाव माना जाता था एवं असाध्य भी। मगर तत्कालीन धारणा के विपरीत आत्रेय ने कहा कि पागलपन से देवता अथवा राक्षसों का नाम मात्र भी संबंध नहीं है, अपितु पागलपन अनुचित आचरण के कारण उत्पन्न होता है तथा यथोचित उपचार से इसका प्रतिकार भी किया जा सकता है। ज्ञातव्य है कि आगे चलकर फिलिप पीनल ने भी पागलपन की अंधविश्वासी धारणा को बदला। पागलों को कटघरे में बंद कर दिया जाता था अथवा उन पर कुत्ते छोड़ दिए जाते थे और तरह-तरह की शारीरिक यातनाएं दी जाती थीं। पीनल ने इस अमानवीयता के

आत्रेय ने रोगों को कई वर्गों में बांटा है - साध्य रोग, असाध्य रोग, तंत्र-मंत्र द्वारा साध्य रोग, तथा वे रोग जिनके उपचार की संभावना बहुत कम होती है। आत्रेय संहिता में जल चिकित्सा का भी वर्णन मिलता है। आत्रेय ने नैतिक कारणों का भी विवेचन किया है। ज्वर, अतिसार, पेचिश, रक्तचाप आदि के उपचार की विशेष चर्चा आत्रेय ने की है। इतना ही नहीं, इस ग्रंथ में विषों के प्रतिकारकों का प्रचुर उल्लेख मिलता है। आयुर्वेद में महर्षि आत्रेय का वही स्थान है जो यूनानी चिकित्सा में हिपोक्रेटीस का। आत्रेय सामाजिक भ्रांतियों एवं रूढ़ियों के कट्टर विरोधी थे। एक उदाहरण पर्याप्त होगा। अपने यहां और बाहर भी पागलपन को देवताओं, राक्षसों के प्रकोप का प्रभाव माना जाता था एवं असाध्य भी। मगर तत्कालीन धारणा के विपरीत आत्रेय ने कहा कि पागलपन से देवता अथवा राक्षसों का नाम मात्र भी संबंध नहीं है, अपितु पागलपन अनुचित आचरण के कारण उत्पन्न होता है तथा यथोचित उपचार से इसका प्रतिकार भी किया जा सकता है।

चरक संहिता के प्रत्येक अध्याय का आरंभ इन पंक्तियों में होता है – 'पूजनीय आत्रेय ने ऐसा कहा।' (इति ह स्माह भगवान आत्रेयः) वास्तव में इस ग्रंथ में आत्रेय एवं उनके शिष्यों के बीच चिकित्सा–शास्त्र के विभिन्न पहलुओं पर हुए विचार–विमर्श का विशद वर्णन है। अतः प्रायः हर अध्याय में 'आत्रेय ने ऐसा कहा' लिखना स्वाभाविक है।

खिलाफ संघर्ष किया और पागलों के लिए मानसिक अस्पतालों की व्यवस्था करायी। तुलनात्मक ढंग से देखिए कि हमारे विज्ञान मनीषियों की दृष्टि कितनी परिष्कृत थी और वे कितना आगे थे।

आत्रेय का एक और महत्वपूर्ण योगदान है, वह यह कि इन्हीं के उपदेशों पर काय चिकित्सा की आधारशिला रखी गयी। आत्रेय ने भरद्वाज का ज्ञान प्राप्त करके अपने शिष्यों–अग्निवेश, भेल, जतूकर्ण, पराशर, हारीत और क्षारपाणि को दिया। उन्होंने अपने–अपने आयुर्वेदीय ग्रंथ रचे। 'चरक संहिता' काय चिकित्सा का प्रामाणिक ग्रन्थ है, वह महर्षि आत्रेय के उपदेशों पर आधारित है। इसमें आत्रेय के उपदेशों का संग्रह अग्निवेश ने किया और उसे ग्रंथ रूप दिया। आगे चलकर चरक तथा दृढ़बल आदि ने उसमें संशोधन किया।

चरक संहिता के प्रत्येक अध्याय का आरंभ इन पंक्तियों में होता है – 'पूजनीय आत्रेय ने ऐसा कहा।' (इति ह स्माह भगवान आत्रेयः) वास्तव में इस ग्रंथ में आत्रेय एवं उनके शिष्यों के बीच चिकित्सा-शास्त्र के विभिन्न पहलुओं पर हुए विचार-विमर्श का विशद वर्णन है। अतः प्रायः हर अध्याय में 'आत्रेय ने ऐसा कहा' लिखना स्वाभाविक है।

आचार्य आत्रेय ऐसी गोष्ठियों में जिस विषय पर वार्ता करना चाहते, उसकी पूर्व घोषणा कर देते। उनके शिष्य एवं आस-पास के अन्य ऋषि एवं विद्वान विचार-विमर्श के लिए एकत्रित होते। शिष्य प्रश्न पूछते, आत्रेय उनका उत्तर देते, शंकाओं का समाधान करते। वस्तुतः आयुर्वेद की आधारशिला महर्षि आत्रेय ने ही रखी। आत्रेय न होते तो 'चरक संहिता' जैसा आयुर्वेद का विश्वकोष अस्तित्व में भी आता, कहना असंभव प्रतीत होता है।

कौमारभृत्य जीवक : बौद्धकालीन चिकित्सक

आज से कोई ढाई हजार साल पूर्व भारत की कला, संस्कृति और वैभव की ध्वजा कीर्ति चारों ओर फैल रही थी। मगध की राजधानी थी राजगृह और राजा थे बिंबिसार। इस राज्य के उत्तर में वज्जि गणराज्य था जिसकी राजधानी वैशाली थी। यों तो राजगृह और वैशाली दोनों धनधान्य, वैभव से परिपूर्ण थे लेकिन वैशाली में एक और आकर्षण था जो मगध में नहीं था। वैशाली में अंबपाली (आम्रपाली) गणिका थी जो नगरवासियों का मनोरंजन करती थी। अंबपाली रूप, गुण, नृत्य, संगीत में पारंगता थी और वैदुष्य में भी उसकी कीर्ति चारों ओर थी। उस समय राजगृह का नैगम (नगर सेठ) किसी काम से वैशाली आया, लौटकर उसने बिंबिसार से वैशाली की समृद्धि की चर्चा की और पूछा कि 'देव? हम भी एक गणिका रखें!' राजा की अनुमति मिल जाने पर राजगृह में अभिरूप दर्शनीय एक कुमारी, सालवती को गणिका चुना गया। शीघ्र ही वह लोकप्रिय हो गई और उसकी ख्याति अंबपाली की भांति चारों ओर फैलने लगी। लेकिन यह गणिका अचिर में ही गर्भवती हो गई। उसने सोचा कि जब लोगों को मेरे गर्भधारण के बारे में पता लग जायेगा, तो उनकी दिलचस्पी मेरे प्रति समाप्त हो जायेगी। अतः सालवती ने बीमार होने का नाटक किया और नौकरानी से कहा – 'कोई पुरुष आये और मुझे पूछे तो उससे कहना कि बीमार है।'

फिर सावलती ने समय पर एक बच्चे को जना और अपनी नौकरानी को आज्ञा दी कि इसे सूप में रखकर कूड़े के ढेर में छोड़ आये। नौकरानी ने वैसा ही किया। राजकुमार अभय उधर से गुजर रहे थे कि कौओं से घिरे उस बच्चे को देखकर लोगों से पूछा – 'यह कौओं से घिरा क्या है?' तब लोगों ने बताया – 'देव? बच्चा है, जीता है।' तब कुमार ने उसे अंतःपुर में भिजवा दिया और वहीं उसका लालन-पालन हुआ। 'जीता है, कहने से उसका नाम पड़ा – 'जीवक'। चूंकि कुमार ने पाला, अतः नाम हुआ 'कौमारभृत्य'। यही कौमारभृत्य जीवक आगे चलकर महान चिकित्सक हुआ। उत्तर भारत में जीवक की टक्कर का कोई चिकित्सक न हुआ। आस-पास ही नहीं, दूर देश के राजे-महाराजे तक उनसे अपना इलाज करवाने को

उत्सुक रहते। जीवक ने बड़ा यशस्वी जीवन प्राप्त किया।

थोड़ा बड़ा होने पर जीवक राजकुमार की बिना अनुमति के तक्षशिला गया और वहां के वैद्य (संभवतः आत्रेय पुनर्वसु) से निवेदन किया – 'आचार्य! मैं शिल्प सीखना चाहता हूं।' प्रति उत्तर में आचार्य आत्रेय ने कहा – 'तो भंते जीवक! सीखो।' और सात वर्ष तक वह आचार्य के सानिध्य में सीखता-पढ़ता रहा। लेकिन उसे लगता कि इस शिल्प का अंत नहीं है। अतः हार कर उसने आचार्य से पूछा – 'आचार्य! मैं बहुत पढ़ता हूं, कब इस शिल्प का अंत जान पड़ेगा।' आचार्य ने कहा – 'भंते, खनती (खनित्र) लेकर तक्षशिला के योजन-योजन चारों ओर घूम कर अभैषज्य (औषधि के अनुपयुक्त) देखो और उसे ले आओ।' लौटकर और जीवक के यह बताने पर कि मैंने अभैषज्य नहीं देखा आचार्य ने कहा – 'सीख चुके भंते जीवक! यह तुम्हारी जीविका के लिए पर्याप्त है।'

यह कह कर आचार्य ने जीवक को थोड़ा सा पाथेय (राह खर्च) दिया और जीवक गुरु को प्रणाम कर राजगृह की ओर चल पड़ा।

मार्ग में उसका पाथेय समाप्त हो गया तो उसने सोचा कि चिकित्सा के आधार पर आजीविका जुटानी चाहिए। उस समय साकेत में नगर सेठ की भार्या पिछले सात वर्षों से भयंकर सिर दर्द से पीड़ित थी। पहले तो सेठानी जीवक से चिकित्सा कराने को तैयार नहीं हुई लेकिन ठीक न होने पर कुछ न लेने की बात पर वह तैयार हो गई और जीवक ने एक ही नस्य से उसका भीषण सिर दर्द ठीक कर दिया। पारिश्रमिक स्वरूप सेठानी के पुत्र ने चार हजार कार्षापण, सेठानी ने भी इतना ही, बहू ने भी तथा गृहपति ने भी इतना धन दिया, साथ में एक दासी और रथ भी। इस संपदा के साथ जीवक राजगृह पहुंचा और राजकुमार को अपनी पहली अर्जित आजीविका अर्पित करते हुए कहा – 'देव, इसे स्वीकार करें।' इस पर राजकुमार ने कहा – 'नहीं भंते, यह तेरा ही रहे। हमारे ही अंतःपुर में भवन बनवाकर रहो।' और जीवक वहां स्थायी रूप से रहने लगे।

उस समय बिंबिसार भगंदर से पीड़ित थे। अभय ने जीवक से चिकित्सा कराने को राजा से कहा। जीवक ने राजा के भगंदर को एक ही लेप से दूर कर दिया। प्रसन्न होकर महाराजा ने जीवक को राजचिकित्सक बना दिया। जीवक ने भगवान बुद्ध की भी चिकित्सा की थी।

चरक : काय चिकित्सा के प्रणेता

चरक संहिता, काय चिकित्सा का आदि एवं प्रामाणिक ग्रंथ है। इसके नाम से इसके रचयिता के रूप में चरक का नाम लिया जाता है। वस्तुतः जो चरक संहिता हमें आज प्राप्त है (निर्णय सागर प्रेस, बम्बई से प्रकाशित), वह अग्निवेश द्वारा रची गई थी, उसका प्रतिसंस्कार किया चरक ने तथा उसे पूरा किया दृढ़बल ने। इस गद्य-पद्य मिश्रित 120 अध्यायों वाले चिकित्सा ग्रंथ के उपदेष्टा हैं – आत्रेय पुनर्वसु तथा अग्निवेश। वास्तव में भरद्वाज से ज्ञान प्राप्त कर महर्षि आत्रेय ने यह ज्ञान 6 शिष्यों अग्निवेश, भेल, जतूकर्ण, पराशर, हारीत और क्षारिपाणि को दिया था। सर्वप्रथम अग्निवेश ने आयुर्वेदीय ज्ञान को तंत्रबद्ध किया। बाद में अन्य ने भी अपनी संहिताएं रचीं लेकिन सबसे अधिक प्रतिष्ठा अग्निवेश के तंत्र को मिली और यही चरक तथा दृढ़बल के परिश्रम से आज हमें चरक संहिता के रूप में प्राप्त है।

आधुनिक युग में उपलब्ध चरक संहिता के प्रत्येक अध्याय के प्रारंभ की पुष्पिका में पहला वचन मिलता है – 'इति ह स्माह भगवानात्रेयः' अर्थात् 'ऐसा भगवान आत्रेय ने कहा।' चरक संहिता के 120 अध्यायों में से 79 अध्यायों की समाप्ति में यह वाक्य मिलता है – 'अग्निवेश कृते तंत्रे चरक प्रतिसंस्कृते।' अर्थात् 'अग्निवेश द्वारा रचित और चरक द्वारा प्रतिसंस्कारित' और शेष के ४१ अध्यायों में ये शब्द आते हैं '...दृढ़बल संपूरिते' अर्थात् 'दृढ़बल ने इसे

चरक संहिता, काय चिकित्सा का आदि एवं प्रामाणिक ग्रंथ है। इसके नाम से इसके रचयिता के रूप में चरक का नाम लिया जाता है। वस्तुतः जो चरक संहिता हमें आज प्राप्त है (निर्णय सागर प्रेस, बम्बई से प्रकाशित), वह अग्निवेश द्वारा रची गई थी, उसका प्रतिसंस्कार किया चरक ने तथा उसे पूरा किया दृढ़बल ने। इस गद्य-पद्य मिश्रित 120 अध्यायों वाले चिकित्सा ग्रंथ के उपदेष्टा हैं – आत्रेय पुनर्वसु तथा अग्निवेश।

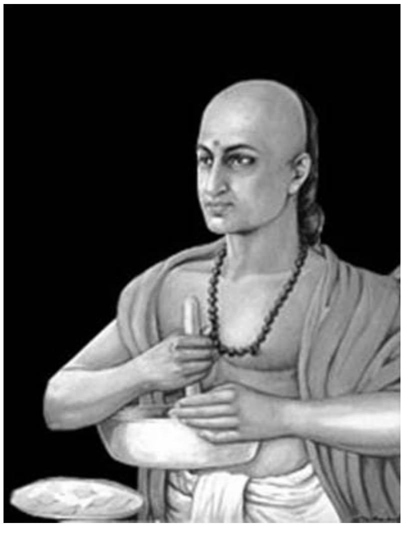

पूरा किया।' इस प्रकार महर्षि आत्रेय द्वारा उपदेशित, अग्निवेश रचित, चरक द्वारा प्रति संस्कारित और दृढ़बल द्वारा संपूरित संहिता ही चरक संहिता है। तात्पर्य यह है कि चरक संहिता के प्रणेता एकमात्र चरक नहीं थे।

इसमें भी विवाद है कि चरक नामधारी कोई व्यक्ति था भी या नहीं। चरक संहिता के प्रतिसंस्कर्त्ता चरक कौन थे? कृष्ण यजुर्वेद की एक शाखा का नाम चरक है, जिसका संबंध वैशंपायन से था। वैशंपायन के शिष्य चरक कहलाते थे। जो शिष्य प्रथम गुरु के पास से विद्या प्राप्त करके ज्ञानार्जन के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमते फिरते थे (चलते रहने के कारण), वे चरक कहलाते थे। वैयाकरण पाणिनी के बारे में कहा जाता है कि शब्द सामग्री की खोज में उन्होंने लंबी यात्राएं की। यही उनका 'चरक' रूप था। पीछे चलकर वैद्यों को भी चरक कहा जाने लगा क्योंकि ये भ्रमणशील वैद्य (चरक) रोगियों की व्याधियों को दूर करने के लिए यत्र-तत्र विचरते रहते थे। ऐसा विश्वास है कि इन्हीं में से काय चिकित्सा में निपुण किसी वैद्य ने अग्निवेश के ग्रंथ का प्रतिसंस्कार किया होगा, जिसके जन्म, काल, स्थान आदि के बारे में हमें स्पष्ट ज्ञान नहीं है। पीछे आयुर्वेद में निष्णात वैद्यों को चरक या चरकाचार्य भी कहा जाता था। चरक संहिता काय चिकित्सा (औषध निदान) का महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इसकी ख्याति बाहर भी फैली, अरबी में इसका अनुवाद हुआ। अलबेरूनी ने लिखा है - 'हिंदुओं की एक पुस्तक है, जो चरक के नाम से प्रसिद्ध है। यह औषधि विज्ञान की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है।'

चरक संहिता में 8 खंड हैं जिनमें प्रत्येक को 'स्थान' कहा जाता है। वे इस प्रकार हैं :

1. सूत्र स्थान - इसमें औषधि विज्ञान, आहार, पथ्यापथ्य, विशेष रोग तथा मन के रोगों की चिकित्सा का वर्णन है।
2. निदान स्थान - इसमें 8 प्रमुख रोगों की जानकारी दी गई है।
3. विमान स्थान - रुचिकर स्वास्थ्यवर्धक भोज्यों के बारे में जानकारी दी गई है।
4. शारीर स्थान - शरीर की रचना, गर्भ स्थिति, शिशु का जन्म तथा विकास आदि बातों का वर्णन है।
5. इंद्रिय स्थान - रोगों की चिकित्सा वर्णित है।
6. चिकित्सा स्थान - प्रमुख रोगों के प्रमुख उपाय दिए गए हैं।

7-8. कल्प तथा सिद्धि स्थान - कुछ छोटे-मोटे रोगों की जानकारी एवं चिकित्सा की बातें लिखी गई हैं। आज मेडिकल के छात्रों को डाक्टरी की उपाधि लेने के बाद 'हिपोक्रेटीस की शपथ' दिलाई जाती है। हमारे यहां भी यह परंपरा थी। चरक में वैद्यों को कुछ नियम पालन हेतु आदेश रूप में बताये जाते थे। यथा : 'तू रात-दिन भले ही कार्य में व्यस्त रहे, तू अपने जीवन अथवा रोजी की परवाह किये बिना रोगियों को राहत पहुंचाने का हर संभव प्रयास करेगा।' 'रोगी के गृह के विशिष्ट रीति-रिवाजों के बारे में तू अन्य किसी को कुछ नहीं बताएगा। यह जानते हुए भी रोगी की जीवन लीला समाप्त होने वाली है, तू इस बात को वहाँ किसी से नहीं कहेगा अन्यथा रोगी या अन्य व्यक्तियों को धक्का लगेगा।' 'तू भले ही कितना ही ज्ञान प्राप्त कर चुका हो, तुझे अपने ज्ञान की बड़ाई नहीं करनी होगी। अधिकांश व्यक्ति उन व्यक्तियों के शेखी बघारने से चिढ़ उठते हैं जो अन्यथा भले एवं विशेषज्ञ होते हैं।'

अति प्राचीन युग में हमारी चिकित्सा प्रणाली का उद्देश्य इतना व्यापक था, पद्धति इतनी परिपूर्ण थी कि 'चरक संहिता' केवल भारत में ही नहीं, विदेशों में भी लोकप्रिय हुई और इसकी महत्ता को स्वीकार करते हुए आज भी पाश्चात्य विद्वान मानते हैं कि चरक-सुश्रुत के काल में भारतीय चिकित्सा यूनानी पद्धति से कहीं आगे थी।

अरबी में चरक संहिता के अनुवाद के अतिरिक्त तिब्बती और चीनी भाषाओं के आयुर्वेद साहित्य पर भी इस ग्रंथ का प्रभाव पड़ा। इसकी बहुत सी टीकाएं उपलब्ध हैं। पुरानी टीकाओं में भट्टार हरिश्चंद्र (5वीं शती) की 'चरकन्यास', जेज्जट (6ठीं शती) कृत 'निरंतरपद' और चक्रपाणिदत्त (11वीं शती) की 'आयुर्वेद दीपिका' या 'चरकतात्पर्य' आदि प्रमुख हैं। बाणभट्ट की 'कादंबरी' में भी चरक का उल्लेख है।

सुश्रुत : शल्य चिकित्सा के प्रणेता

हमें इस बात का गर्व है कि जो चिकित्सा पद्धति (प्लास्टिक सर्जरी) विगत शती में दुनिया के तमाम मुल्कों में पनपी, वह इस भूमि में आज से दो हजार साल पहले ही जन्म ले चुकी थी और उसका व्यापक प्रसार था। इसका प्रमाण है महर्षि सुश्रुत द्वारा प्रणीत शल्य चिकित्सा का महान ग्रंथ - 'सुश्रुत संहिता।' इसमें उपदेष्टा हैं धन्वंतरि और संपूर्ण संहिता सुश्रुत को संबोधित करके कही गई है। श्रोता रुप में सुश्रुत के अतिरिक्त वैतरणी, औरभ्र, पौष्कलावत, करवीर्य, गोपुररक्षित आदि हैं। इस संहिता के प्रतिसंस्कारकर्त्ता नागार्जुन माने जाते हैं। प्राचीन भारत में कई नागार्जुनों का उल्लेख है लेकिन सुश्रुत संहिता से किस नागार्जुन का संबंध था, ज्ञात नहीं है।

यद्यपि सुश्रुत संहिता प्रमुख रूप से शल्य चिकित्सा का ग्रंथ है लेकिन इसमें काय चिकित्सा का भी उल्लेख है। इसमें आरंभिक अंश (शल्य तंत्र) कुल 120 अध्यायों में विभाजित है। सीान 5 ही हैं यथा – सूत्र स्थान (46 अध्याय), निदान स्थान (16 अध्याय), शारीर स्थान (10 अध्याय), चिकित्सा स्थान (40 अध्याय), कल्प स्थान (8 अध्याय)। परिशिष्ट रूप में दिए गए उत्तर तंत्र (काय चिकित्सा) में कुल 66 अध्याय हैं।

शल्य तंत्र में सुश्रुत कहते हैं कि विद्यार्थी को सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों ज्ञान का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये। वे लिखते हैं–'ऐसा चिकित्सक, जो केवल शास्त्र (सैद्धांतिक ज्ञान) में पारंगत हो किंतु आचार की व्यावहारिक रीतियों से अपरिचित हो अथवा वह चिकित्सक जिसे उपचार के व्यावहारिक विवरणों का ज्ञान तो हो, किंतु उसने अपने आत्मविश्वास के कारण पुस्तकों का अध्ययन न किया हो, अपने व्यवसाय के लिए अनुपयुक्त होते हैं।'

चूंकि शल्य तंत्र का क्रियात्मक ज्ञान से अधिक संबंध है, अतः 'योग्यासूत्रीय' अध्याय में वह बताते हैं कि किस कर्म का किस पर अभ्यास किया जाय। यथा – 'कुम्हड़ा, लौकी, तरबूज, खीरा, ककड़ी आदि वस्तुओं में छेदन कार्य का अभ्यास करना चाहिए। ऊपर को काटना, नीचे को काटना आदि कार्य इन्हीं पर करना चाहिए। मशक यानी चमड़े की थैली में पानी या कीचड़ आदि भर कर छेदन कर्म सीखना चाहिए। बाल वाली त्वचा पर लेखन कार्य, मरे पशुओं की शिराओं तथा कमलनाल में बेधन कर्म का अभ्यास करना चाहिये। घुन खायी लकड़ी, सूखी तुंबी के मुख में ऐषण कार्य, कोमल त्वचाओं में सीवन कार्य, पुस्त (मिट्टी या लकड़ी के मॉडल) के अंग-प्रत्यंगों पर पट्टी आदि बांधने का अभ्यास करना चाहिए। मृदु मांस के टुकड़ों पर अग्नि और क्षार का अभ्यास करना चाहिए।' (सू. अ. 9/4)

सुश्रुत में शवच्छेदन का कार्य बताया गया है – 'शल्य शास्त्र का संपूर्ण ज्ञान बिना संशय के जानने वाले व्यक्ति के लिए आवश्यक है कि वह मृत शरीर का शोधन करके अंग-प्रत्यंग का निश्चय करे। जो वस्तु आंख से पृथक देख ली जाती है, शास्त्र से भी जिसे समर्थन प्राप्त हो जाता है, इस प्रकार दोनों प्रकारों से जानना ही ज्ञान को बढ़ाता है, इसलिए संपूर्ण अंगों वाले, विष न भरे हुए, बहुत लंबी बीमारी से न मरे हुए एक सौ वर्ष की आयु से कम व्यक्ति के शव में आंत्र व मल निकालकर पुरुष के शव को बहते हुए जल वाली नदी में पिंजरे के अंदर मूंज, वल्कल, कुश, सन आदि से लपेट कर एकांत स्थान में रख कर गलाएं। भली प्रकार नरम हो जाने पर इसको निकालकर सात दिन तक खस, बाल, बांस की बनायी हुई कूंची (ब्रश) से धीरे-धीरे रगड़ते हुए वचा से लेकर अंदर और बाहर के प्रत्येक अंग-प्रत्यंग को देखना चाहिए।' (शा. अ. 5/47-49)।

नई नाक लगाने की प्रक्रिया का वर्णन सुश्रुत के ही शब्दों में पढ़िए – 'अब मैं एक कृत्रिम नाक बनाने की प्रक्रिया का वर्णन करूंगा। सबसे पहले लता की एक पत्ती लेते हैं, इतनी लंबी और चौड़ी जो पूरे कटे हुए अंग को पूर्णरूप से ढंकने के लिए पर्याप्त होती है, फिर गाल पर से इस पत्ती के बराबर जीवित मांस का एक टुकड़ा उतार लेते हैं। इसे उतार कर फुर्ती से कटी हुई नाक पर चिपका देते हैं। कटी नाक को पहले से छील कर तैयार रखते हैं। चिकित्सक को इसे धैर्य के साथ पट्टी से बांध देना चाहिए। सुश्रुत ने विभिन्न आपरेशनों के लिए भिन्न-भिन्न शल्य उपकरणों का वर्णन किया है। उन्होंने 101 प्रकार के कुंद उपकरण तथा 20 प्रकार के पैने उपकरण गिनाए हैं। यंत्रों के बारे में सुश्रुत लिखते हैं – 'उपकरण सामान्यतया अच्छे लोहे के बने होने चाहिए। उनका आकार संतुलित हो, उन्हें मजबूती से पकड़ा जा सके तथा उनके सिरे देखने से डरावने न लगते हों।'

शरीर के विभिन्न भागों पर पट्टी बांधने की उन्होंने 81 विभिन्न रीतियां बताई हैं। प्रदाहकों के प्रयोग-प्रदाहन, जोंक द्वारा रक्त निकालने तथा शिरा में पंक्चर (छेदन) करने का भी वर्णन सुश्रुत में मिलता है। चरक की भांति सुश्रुत की ख्याति देश की सीमा से बाहर खूब फैली। 9वीं और 10वीं शती के पूर्व में कंबोडिया और पश्चिम में अरब तक सुश्रुत संहिता की चर्चा पहुंच चुकी थी। 11वीं शती में चक्रपाणिदत्त ने 'भानुमती व्याख्या' नाम से इसकी टीका लिखी। जेज्जट और गयदास की भी टीकाएं उपलब्ध हैं। 13वीं शती में डल्हण ने इसकी टीका की।

sdprasad24oct@yahoo.com

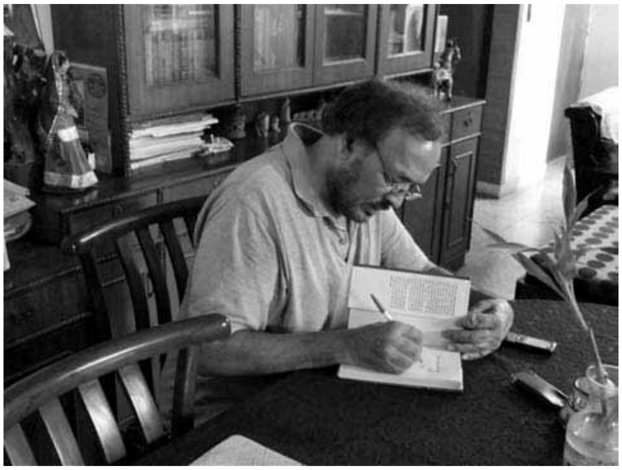

विज्ञान कथाएं सदैव तार्किक होती हैं

देवेन्द्र मेवाड़ी से मनीष मोहन गोरे की बातचीत

देवेंद्र मेवाड़ी भारत के एक प्रतिष्ठित और लोकप्रिय विज्ञान लेखक हैं। उनके लिए विज्ञान लेखन एक मिशन है। मेवाड़ी जी का जन्म 7 मार्च 1944 को नैनीताल (उत्तराखंड) के कालाआगर नामक गांव में हुआ था। उन्होंने एम एससी (वनस्पति विज्ञान), एम.ए. (हिंदी) और पत्रकारिता में स्नातकोत्तर डिप्लोमा की शिक्षा हासिल की है। एम.एससी उपरान्त, आरम्भ के 3 वर्ष भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में नौकरी करने के बाद मेवाड़ी जी ने अपनी रूचि के अनुकूल तेरह वर्ष तक मासिक कृषि पत्रिका 'किसान भारती' का संपादन किया और उसके बाद एक राष्ट्रीयत बैंक के जनसंपर्क विभाग में प्रमुख जिम्मेदारियों को 22 वर्षों तक सँभालते हुए साल 2004 में वह सेवानिवृत्त हुए। मगर इस दौरान, उनके भीतर छिपे बैठे विज्ञान लेखक की कलम हर देश-काल-परिस्थिति में चलती रही। उनकी पहली रचना 'जानि शरद ऋतु खंजन आए' 1965 में इलाहाबाद से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'विज्ञान जगत' में तब छपी थी जब वे एम.एस-सी के विद्यार्थी थे। विगत 50 वर्षों से भी अधिक समय से वह हिंदी में लोकप्रिय विज्ञान लेखन करते आ रहे हैं। वैज्ञानिक विषयों पर देश की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में नियमित लेखन करते हुए मेवाड़ी जी के अभी तक 1500 से अधिक लेख तथा 18 मौलिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुके हैं। 'विज्ञाननामा', 'मेरी यादों का पहाड़' (आत्मकथात्मक संस्मरण), 'मेरी विज्ञान डायरी' (भाग-1), 'मेरी विज्ञान डायरी' (भाग-2), 'मेरी प्रिय विज्ञान कथाएं', 'भविष्य' तथा 'कोख' (विज्ञान कथा संग्रह), 'विज्ञान की दुनिया', 'सौरमंडल की सैर', 'विज्ञान बारहमासा', 'विज्ञान प्रसंग', 'सूरज के आंगन में', 'फसलें कहें कहानी', 'विज्ञान जिनका ऋणी है' (भाग-1 तथा भाग-2), 'अनोखा सौरमंडल', 'पशुओं की प्यारी दुनिया', 'हॉरमोन और हम' उनकी कुछ लोकप्रिय पुस्तकें हैं। मेवाड़ी जी ने डायरी विधा को अपने विज्ञान लेखन का औजार बनाकर एक अनोखा प्रयास किया है। विज्ञान लेखन में अहम् योगदान के लिए मेवाड़ी जी को केंद्रीय हिंदी निदेशालय, आगरा का प्रतिष्ठित 'आत्माराम पुरस्कार' (2005), राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् (विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार) का राष्ट्रीय पुरस्कार (2000), भारतेंदु हरिश्चंद्र राष्ट्रीय बाल साहित्य पुरस्कार, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय (1994-99 तथा 2002) और मेदिनी पुरस्कार, पर्यावरण एवं वन मंत्रालय (2009) जैसे महत्वपूर्ण पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। उनके सम्मान में विज्ञान परिषद् प्रयाग, इलाहाबाद के 'विज्ञान' मासिक का 'देवेंद्र मेवाड़ी सम्मान अंक' भी वर्ष 2006 में प्रकाशित किया गया था।

विज्ञान लोकप्रियकरण का एक मुख्य उद्देश्य समाज से अंधविश्वास और रुढ़ियों का उन्मूलन करना है और मेवाड़ी जी की रचनाओं में इस उद्देश्य की झलक गाहे-बगाहे देखने को मिलती है। अपने लेखन के दौरान मुख्य विषय की चर्चा करते हुए वह बीच-बीच में छोटी-बड़ी जरूरी वैज्ञानिक जानकारियां भी देते चलते हैं जिससे पाठकों का ज्ञानवर्धन होता है। युवा विज्ञान लेखक मनीष मोहन गोरे ने 'इलेक्ट्रानिकी आपके लिए' हेतु देवेन्द्र मेवाड़ी जी से उनके जीवन और विज्ञान लेखन को लेकर एक लम्बी बातचीत की है जो यहाँ प्रस्तुत है।

मेवाड़ी जी, विज्ञान लेखन की प्रेरणा आपको कहाँ से मिली?

सच पूछिए तो बचपन से ही अपने आसपास की दुनिया को जानने की जिज्ञासा ने मुझे विज्ञान की ओर आकर्षित किया और उसके बारे में जो कुछ भी पता लगता था, उसे मैं अपने साथियों और दूसरे लोगों को बताने के लिए बहुत उत्सुक रहता था। शायद मेरी इसी प्रवृत्ति ने मुझे विज्ञान पढ़ने, कहने और लिखने की ओर आगे बढ़ाया। शुरूआत से ही बात करूं तो मेरे आसपास की प्रकृति मेरे लिए बहुत रहस्यमयी थी। मैं जानना चाहता था कि सूरज क्यों उगता है और क्यों अस्त होता है, क्यों रात आती है, आसमान में चांद-तारे कहां से आ जाते हैं, क्यों बादल बनते हैं, क्यों वर्षा होती है, नन्हे बीज उग कर पेड़-पौधे कैसे बन जाते हैं, फूल क्यों खिलते हैं, रंग-बिरंगी तितलियां और पशु-पक्षी कहाँ से आते हैं और इसी तरह के तमाम प्रश्न। इन प्रश्नों के उत्तर मैं मां से पूछा करता था जो अपने ढंग से उनके बारे में बता देती थी और जिन प्रश्नों का उत्तर नहीं होता था, उनके लिए कहती थी कि पढ़-लिख कर तुझे पता लग जाएगा। इस तरह प्रकृति और मां मेरी पहली प्रेरणाएं थीं, जिन्होंने मुझे जिज्ञासु बनाया और जिज्ञासाओं के उत्तर खोजने के लिए प्रेरित किया। उसके बाद अपनी पाठ्यपुस्तकों और शिक्षकों से विज्ञान की बातें पता लगीं। हाईस्कूल में पढ़ता था तो 'विज्ञानलोक' पत्रिका देखकर मैं चकित रह गया था। उस पत्रिका ने मुझे मोहित कर लिया और मैं उसमें छपे हुए लेखों की तरह खुद भी विज्ञान की बातें बताने के लिए लालायित हो उठा। मैं 'विज्ञानलोक' के बाल क्लब का सदस्य भी बन गया। आगे चल कर मैंने वर्ष 1965 में दो लेख लिखे - 'जानि शरद ऋतु खंजन आए' तथा 'शीतनिष्क्रियता', और उन्हें इलाहाबाद से छपने वाली विज्ञान पत्रिका 'विज्ञान जगत' को भेज दिया। उन लेखों के साथ मैंने भावुक होकर एक पत्र भी संपादक को लिखा कि मैं विज्ञान के विषयों पर लिखना चाहता हूं लेकिन मेरे लेख कौन प्रकाशित करेगा? उस पत्र के उत्तर में मुझे 'विज्ञान जगत' के संपादक आर.डी. विद्यार्थी का उत्तर मिला कि 'तुम लिखते रहना और अपने लेख मुझे भेजना। मैं उन्हें प्रकाशित करूंगा। कौन जाने तुम स्वयं कल एक विज्ञान लेखक बनो'। उनके इन शब्दों ने मेरे मन में विज्ञान लेखन की असली लौ जगा दी और मैं विज्ञान लेखन करने लगा। मैंने उसी वर्ष एक और लेख 'कुमाऊं और शंकुधारी' लिखा जो विज्ञान परिषद्, प्रयाग की पत्रिका 'विज्ञान' में प्रकाशित हुआ। इस पत्रिका ने इस वर्ष प्रकाशन के 100 वर्ष पूरे कर लिए हैं।

सच पूछिए तो बचपन से ही अपने आसपास की दुनिया को जानने की जिज्ञासा ने मुझे विज्ञान की ओर आकर्षित किया और उसके बारे में जो कुछ भी पता लगता था, उसे मैं अपने साथियों और दूसरे लोगों को बताने के लिए बहुत उत्सुक रहता था। शायद मेरी इसी प्रवृत्ति ने मुझे विज्ञान पढ़ने, कहने और लिखने की ओर आगे बढ़ाया। शुरूआत से ही बात करूं तो मेरे आसपास की प्रति मेरे लिए बहुत रहस्यमयी थी। मैं जानना चाहता था कि सूरज क्यों उगता है और क्यों अस्त होता है, क्यों रात आती है, आसमान में चांद-तारे कहां से आ जाते हैं, क्यों बादल बनते हैं, क्यों वर्षा होती है, नन्हें बीज उग कर पेड़-पौधे कैसे बन जाते हैं, फूल क्यों खिलते हैं, रंग-बिरंगी तितलियां और पशु-पक्षी कहां से आते हैं और इसी तरह के तमाम प्रश्न।

आप 60 की उम्र तक जन-संपर्क क्षेत्र में सेवारत रहे मगर उस दौरान भी सतत् और जबरदस्त लेखन में मशगूल रहा करते थे। दो बिल्कुल अलग प्रकृति के काम आप एक साथ कैसे कर पाते थे?

मैं छह दशक की उम्र तक जनसंपर्क ही नहीं बल्कि अन्य क्षेत्रों से भी जुड़ा रहा। मैंने कृषि अनुसंधान कार्य से अपना सेवाकाल शुरू किया, फिर तेरह वर्षों तक किसानों की मासिक पत्रिका 'किसान भारती' का संपादक रहा, उसके बाद 22 वर्ष जनसंपर्क में बिताए और सेवानिवृत्ति के बाद एक वर्ष तक विज्ञान प्रसार (विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग) में फैलो रहा। इसी तरह जहां तक विषयों की बात है, मैं हर संभव विषय के बारे में पढ़ता हूं और जानता हूं कि कोई भी विषय मेरे विज्ञान लेखन में कहीं भी काम आ सकता है। जनसंपर्क तथा पत्रकारिता से संबंधित कार्य ने मुझे मीडिया के लिए विविध शैलियों में लिखना सिखाया तो अन्य विषयों ने मेरे विज्ञान लेखन को सरसता और संपूर्णता दी।

उदाहरण के लिए आपको बताऊं, मुझे एक दिन मिरांडा कालेज में साहित्य की शिक्षिका डॉ. संज्ञा उपाध्याय का संदेश मिला कि बिहारी ने एक दोहे में नाक की लौंग को चंपा की कली

हर विज्ञान लेखक नवांकुर से ही अपनी लेखन यात्रा प्रारंभ करता है और अगर उसमें लेखन का पैशन यानी जुनून है तो वह कैसी भी परिस्थितियों में निरंतर लिखता रहता है, उसकी कलम व्यस्तताओं और विपरीत परिस्थितियों में भी नहीं रुकती। यही उसके लेखन की साधना है। यह साधना धीरे-धीरे पहचान देने लगती है और अगर उसके लेखन में ज्ञान की गंभीरता और शब्दों का आकर्षण है तो उसके पाठकों की संख्या बढ़ने लगती है।

समझ भौंरा मंडराने की बात लिखी है जबकि जगन्नाथ दास रत्नाकर ने लिखा है कि चंपा की कली पर भौंरे नहीं मंडराते। सच क्या है? मैंने वनस्पति विज्ञान के ज्ञान के आधार पर उन्हें बताया कि चंपा के फूल में मकरंद नहीं होता, इसलिए उस पर भौंरे नहीं मंडराते। इसी तरह पिछले दिनों भोपाल में एक बर्र ने डंक मारा तो मुझे महाकवि जायसी की पंक्तियां याद आई। ये हिंदी साहित्य की बातें थीं लेकिन इन्होंने मेरे विज्ञान लेखन में सरसता भर दी। इसी तरह तमाम ऐतिहासिक तथ्य मेरी विज्ञान कथाओं और वैज्ञानिक रचनाओं को संपूर्णता प्रदान करते हैं। और हां, यहां मैं यह भी बताना चाहता हूं कि भले ही मैंने 60 वर्ष की उम्र तक कितने ही विविध और विपरीत प्रकृति के क्षेत्रों में काम किया हो, लेकिन मेरा विज्ञान लेखन निरंतर चलता रहा। नौकरी में बारह-बारह, चौदह-चौदह घंटे डूबे रहने के बाद भी मैं देर रात तक और अवकाश के दिनों में लिखता रहता था।

हिंदी को आपने अपने लेखन की भाषा के रूप में क्यों चुना?

इसलिए कि यही मेरी भाषा है और मैं इसी भाषा में अपने तमाम भावों को बखूबी व्यक्त कर सकता हूं। हालांकि उच्च शिक्षा में हमें विज्ञान अंग्रेजी में पढ़ाया जाता है फिर भी विज्ञान की बातें अपनी भाषा में और अपने अंदाज में कहने का मेरा मोह सदा बना रहा है। आज भी विज्ञान की तमाम उपलब्धियों के बारे में अंग्रेजी की पुस्तकें और पत्र-पत्रिकाएं पढ़ता हूं लेकिन अपनी बात हिंदी में ही कहता और लिखता हूँ। जिस भाषा से हमें मां की तरह का प्यार होता है, वही भाषा हमें अपनी बात कहने के लिए सटीक शब्द देती है। मेरे लिए भी हिंदी 'मां' की तरह है।

कल का एक नवांकुर विज्ञान लेखक आज देश का एक बहुत बड़ा और लोकप्रिय विज्ञान लेखक है। अपने विज्ञान लेखन के इस लम्बे सफ़र के बारे में हमें संक्षेप में बताएं।

हर विज्ञान लेखक नवांकुर से ही अपनी लेखन यात्रा प्रारंभ करता है और अगर उसमें लेखन का पैशन यानी जुनून है तो वह कैसी भी परिस्थितियों में निरंतर लिखता रहता है, उसकी कलम व्यस्तताओं और विपरीत परिस्थितियों में भी नहीं रूकती। यही उसके लेखन की साधना है। यह साधना धीरे-धीरे पहचान देने लगती है और अगर उसके लेखन में ज्ञान की गंभीरता और शब्दों का आकर्षण है तो उसके पाठकों की संख्या बढ़ने लगती है। आज मुझे भी बहुत अच्छा लगता है जब अनजान, अपरिचित लोगों के बीच कोई कहता है कि 'हमने आपको पढ़ा है'। यह शब्द लेखक के लिए सबसे बड़ा पुरस्कार होते हैं। जहाँ तक मेरी विज्ञान लेखन-यात्रा का प्रश्न है, मैंने विज्ञान पत्रिकाओं के बाद हिंदी की लगभग सभी अग्रणी पत्र-पत्रिकाओं में लिखना शुरू किया। आज यह बताते हुए गर्व होता है कि मुझे 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिंदुस्तान', 'दिनमान', 'नवनीत', 'रविवार' जैसी पत्रिकाओं के मनीषी संपादकों का स्नेह मिला और उन्होंने मेरी रचनाओं का संपादन करके मुझे विज्ञान लेखन की राह पर आगे बढ़ाया। 'साप्ताहिक हिंदुस्तान' में मैंने अनेक लेखमालाएं लिखीं और मेरी पहली विज्ञान उपन्यासिका 'सभ्यता की खोज' भी उसी में सचित्र प्रकाशित हुई। बच्चों के लिए पहला वैज्ञानिक लेख भी उसी में छपा। अपनी लेखन-यात्रा में मैंने कुछ एक्सक्लूसिव रचनाएं भी लिखीं जैसेः 'दक्षिणी ध्रुव में एक भारतीय वैज्ञानिक' लेख 1968 में रंगीन चित्रों के साथ धर्मयुग में छपा था। यह डॉ. गिरिराज सिंह सिरोही की दक्षिणी ध्रुव में जैव घड़ी पर किए गए प्रयोगों के बारे में था। वे प्रथम भारतीय थे जो दक्षिणी ध्रुव पहली बार गए और वहां छह माह तक रहे। उन पर पहली बार मेरा ही लेख छपा। इसी तरह 1970 में प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक डॉ. नार्मन बोरलाग को शांति का नोबेल पुरस्कार मिलने की घोषणा होने पर हिंदी की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में पहली बार मेरे ही लेख छपे थे। 1978 में परखनली शिशु पैदा होने पर इस विषय पर हिंदी में मेरे लेख प्रमुखता से छपे थे। अपनी लेखन यात्रा में मैंने केवल अंग्रेजी से हिंदी में उल्था करके जानकारी देने के बजाए उस जानकारी को अपनी भाषा और अपने अंदाज में लिखा। इस भाषा-शैली के कारण मेरे लेखन को नई पहचान मिली। इसीलिए मैं कहता हूं कि मैं साहित्य की कलम से विज्ञान लिखता हूं। मैंने लगभग हर संभव विधा और शैली में विज्ञान लेखन करने का प्रयास किया है और मेरी पुस्तकें इसका उदाहरण हैं।

विज्ञान फंतासी और विज्ञान कथा को लेकर पाठकों के मन में भ्रम बना रहता है। आप स्वयं एक सशक्त विज्ञान कथाकार हैं इसलिए हम आपसे इन दोनों के बीच के भेद को जानना चाहेंगे।

अगर हम पूरे विज्ञान साहित्य यानी साइंस फिक्शन को देखें तो वह साहित्य का ही एक अभिन्न अंग है, भले ही हिंदी में समालोचकों ने इन कथाओं का अधिक उल्लेख न किया हो। संक्षेप में कहें तो साइंस फिक्शन साहित्य की वह विधा है जो कथा के माध्यम से समाज और लोगों पर पड़ने वाले विज्ञान के वास्तविक अथवा संभावित प्रभाव को दर्शाती है। इसकी परिधि में समाज और लोगों के अतिरिक्त संपूर्ण प्रति भी आती है। विज्ञान कथाओं को जांचने का एक पैमाना यह भी हो सकता है कि वे वर्तमान और अतीत में घट सकती हैं या वर्तमान के संभावित प्रभावों पर भी उन्हें रचा जा सकता है। यहाँ महत्वपूर्ण बात यह है कि विज्ञान कथाएं सदैव तार्किक होती हैं और पाठक उन्हें पढ़ते हुए यह अनुभव करता रहता है कि हां, ऐसा तो हो सकता है। दूसरी ओर, फंतासी विशुद्ध स्वैर कल्पना है जिसका तार्किक होना आवश्यक नहीं है। इस तरह फंतासी तिलिस्म, जादू और चमत्कार के रूप में भी रचा जाता है। जहां तक मेरा सवाल है, मैं तार्किक आधार पर लिखी गई विज्ञान कथाओं का मुरीद हूं। यों, विज्ञान कथाओं में कई बार बस केवल बहुत बारीक फर्क रह जाता है।

विज्ञान कथा और विज्ञान नाटक की विज्ञान संचार में आवश्यकता पर अपनी टिप्पणी से हमें अवगत कराएँ।

कोरे भाषण या लेख के बजाए अगर विज्ञान की जानकारी एक अच्छी कहानी या नाटक के रूप में दी जाए तो पाठक और श्रोता उसे कहीं अधिक रूचि के साथ पढ़ेंगे, देखेंगे और सुनेंगे। विज्ञान कथाएं विश्व भर में पाठकों में इतनी लोकप्रिय हुई हैं कि वे साहित्य का अभिन्न अंग बन गईं। विज्ञान कथा के एक जनक एच.जी. वेल्स अंग्रेजी कथा साहित्य के महान कथा-शिल्पी माने जाते हैं। इसी तरह रे ब्रेडबरी तथा कुछ अन्य विज्ञान कथाकारों को साहित्य में विशेष पहचान मिली है। वर्ष 2007 की साहित्य की नोबेल पुरस्कार विजेता डोरिंस लेसिंग ने स्वयं विज्ञान कथा विधा में लगभग 5 उपन्यास लिखे हैं। और, विज्ञान नाटक कितना प्रभावशाली हो सकता है, इसका सबसे बड़ा उदाहरण एच. जी. वेल्स के प्रसिद्ध उपन्यास 'वार आफ द वर्ल्डस' पर आधारित नाटक का प्रसारण है। इस उपन्यास का नाट्य रूपांतरण 30 अक्टूबर 1938 को अमेरिका में प्रसारित किया गया था जिसकी शुरूआत समाचार शैली में की गई थी। कहते हैं कि उसे सुन कर लाखों लोग डर कर सड़कों पर निकल आए थे कि पृथ्वी पर मंगलवासियों का हमला हो गया है! हमारे देश में भी हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में आकाशवाणी के अनेक नाटक और धारावाहिक प्रसारित किए गए हैं जो विज्ञान लोकप्रियकरण में बहुत सफल सिद्ध हुए हैं। 'विज्ञान प्रसार' तथा 'राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्' (एनसीएसटीसी) ने इस दिशा में अहम भूमिका निभाई है। मैंने स्वयं भी अनेक विज्ञान नाटक लिखे हैं जो आकाशवाणी से प्रसारित हुए हैं।

विज्ञान डायरी लिखकर आपने विज्ञान लेखन में एक नया प्रयोग किया है। इस विधा को लेकर अपने मनोभावों को साझा करना चाहेंगे।

आप ठीक कह रहे हैं मनीष जी, 'मेरी विज्ञान डायरी' विज्ञान लेखन में सचमुच मेरा नया प्रयोग है। मैंने हिंदी या अंग्रेजी में इस तरह का लेखन नहीं देखा है। मैंने यह प्रयोग इसलिए किया क्योंकि मैं पाठकों को अधिक आत्मीय ढंग से जोड़ कर विश्वसनीय जानकारी देना

विज्ञान कथा के एक जनक एच.जी. वेल्स अंग्रेजी कथा साहित्य के महान कथा-शिल्पी माने जाते हैं। इसी तरह रे ब्रेडबरी तथा कुछ अन्य विज्ञान कथाकारों को साहित्य में विशेष पहचान मिली है। वर्ष 2007 की साहित्य की नोबेल पुरस्कार विजेता डोरिंस लेसिंग ने स्वयं विज्ञान कथा विधा में लगभग 5 उपन्यास लिखे हैं। और, विज्ञान नाटक कितना प्रभावशाली हो सकता है, इसका सबसे बड़ा उदाहरण एच. जी. वेल्स के प्रसिद्ध उपन्यास 'वार आफ द वर्ल्डस' पर आधारित नाटक का प्रसारण है। इस उपन्यास का नाट्य रूपांतरण 30 अक्टूबर 1938 को अमेरिका में प्रसारित किया गया था जिसकी शुरूआत समाचार शैली में की गई थी। कहते हैं कि उसे सुन कर लाखों लोग डर कर सड़कों पर निकल आए थे कि पृथ्वी पर मंगलवासियों का हमला हो गया है!

एच.जी. वेल्स

> कुछ लंबी विज्ञान कथाएं या एक उपन्यास लिखने के लिए भी मन बेचैन रहता है। बच्चों और अन्य लोगों के बीच और अधिक जाना चाहता हूं ताकि उन्हें विज्ञान की नई रोचक बातें बता सकूं। और हांए विज्ञान लेखन में रुचि रखने वाले नई पीढ़ी के किसी ऐसे एक या एक से अधिक साथियों को भी तलाश रहा हूं जो अपने जीवन में विज्ञान लेखक बनने का सपना देख रहे हैं। मैं उन्हें अपने अनुभवए अपने संघर्षों के बारे में बताना चाहता हूं ताकि उनका उत्साह बढ़ा सकूं। उन्हें यह भी बताना चाहता हूं कि हमारे समाज में वैज्ञानिक जागरूकता बढ़ाने और अंधविश्वासों से छुटकारा पाने के लिए हमारा विज्ञान लेखन कितना जरूरी है और यह भी किए यह हमारा सामाजिक उत्तरदायित्व है।

चाहता था। डायरी लेखन केवल किसी तारीख में घटी घटनाओं का विवरण भर लिखना या रोज़नामचा नहीं है बल्कि इस विधा में अपने सोच और भावों को अधिक प्रभावशाली ढंग से व्यक्त किया जा सकता है। किसी भी डायरी को पढ़ने के लिए हम में बहुत उत्सुकता बनी रहती है क्योंकि उसमें, हम जानते हैं कि अपने मन की बातें लिखी होंगी। 'मेरी विज्ञान डायरी' में भी आपको मेरा विज्ञान-मन दिखाई देगा। 'मेरी विज्ञान डायरी' के पाठक दूर-दराज भी इसे पढ़ रहे हैं। मुझे महाराष्ट्र और बिहार से भी इसके प्रेमी पाठकों के फोन आए हैं।

पिछले कुछ वर्षों से बच्चों, शिक्षकों और आम जन के बीच जाकर आपने व्याख्यान देने का सिलसिला शुरू किया है। एक विज्ञान लेखक के इस नए संस्करण का मकसद क्या है?

मेरी इस नई कोशिश को अभी केवल करीब डेढ़ साल ही हुआ है। मैं स्कूली बच्चों के साथ सीधा संवाद करने की इच्छा से नवंबर 2013 में पहली बार जयपुर में उनके बीच गया। तब से अब तक मैं दिल्ली, मध्यप्रदेश और उत्तराखंड के लगभग 3000 बच्चों को विज्ञान की बातें बता चुका हूं। उन्हें मैं 'सौरमंडल की सैर' कराता हूं, 'विज्ञान कथाएं' सुनाता हूं और 'लोककथाओं' के जरिए भी विज्ञान की जानकारी देता हूं। बच्चों के साथ सीधा संवाद होने के कारण मुझे उनकी प्रतिक्रिया का तत्काल पता लग जाता है। और, मैंने देखा है कि बच्चे विज्ञान में बहुत रूचि लेते हैं लेकिन उन्हें यह जानकारी रोचक तरीके से बताई जानी चाहिए। केवल किताब रट कर विज्ञान की जानकारी हासिल करने में उन्हें आनंद नहीं आता है जबकि उसी जानकारी को कथा-कहानी, गीत, कविता या नाटक के रूप में सुनने पर वे बहुत खुश होते हैं। मैंने जब भी बच्चों को सौरमंडल की सैर कराई तो उनके शिक्षकों का कहना था कि इसे सुनने में बच्चों का बहुत मन लगा। एक वरिष्ठ प्रधानाचार्य ने तो यह भी कहा कि 20-25 साल तक बच्चों को पढ़ाने के बाद आज मुझे लगा कि विज्ञान कितने रोचक ढंग से पढ़ाया जा सकता है। कहने का मतलब यह है कि हमें बच्चों को हरसंभव रोचक तरीके से विज्ञान समझाने की कोशिश करनी चाहिए। मैं ऐसे स्कूल-कॉलेजों में जाना अधिक पसंद करता हूं जहां बच्चे हिंदी में पढ़ रहे हों और सामान्य आमदनी वाले परिवारों से आते हों। आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों की बस्तियों में जाकर बच्चों से बातें करने का बहुत मन है और मैं कोशिश कर रहा हूं कि वहां अधिक से अधिक जाऊं। उन बच्चों को इस तरह की विज्ञान की जानकारी पाने का बहुत कम अवसर मिलता है।

विविध विधाओं में विज्ञान लेखन करते हुए को लगभग 50 वर्ष हो गए हैं। आज जीवन के 70 के पड़ाव पर पहुंचकर आपके मन में विज्ञान लेखन से जुड़ी ऐसी कौन सी योजना या कार्य है जिसे पूरा करना चाहेंगे? विज्ञान लेखन-संचार के क्षेत्र में आपकी भावी योजनायें क्या हैं?

जैसा कि मैं पहले बता चुका हूं। मैं हर विधा में विज्ञान लिखने का प्रयास कर रहा हूं। बच्चों को रोचक ढंग से विज्ञान समझाने के लिए मैंने एक केन्द्रीय पात्र 'देवीदा' की रचना की है जो बच्चों के दोस्त हैं और उनकी ही भाषा में बोलते हैं। वे वैज्ञानिकों से मिलते हैं, प्रयोगशालाओं-वेधशालाओं में जाते हैं, विज्ञान की किताबें पढ़ते हैं, इंटरनेट टटोलते हैं। मेरी 'सूरज के आंगन में', 'सौरमंडल की सैर' और 'विज्ञान बारहमासा' पुस्तकें इसी अंदाज में लिखी गईं हैं। इधर एक और नई विधा मेरे लेखन में शामिल हुई है- 'यात्रा वृत्तांत।' मेरे यात्रा वृत्तांतों में देश-काल की यात्रा तो होती ही है, उनमें वहाँ देखी गई चीजों की वैज्ञानिक जानकारी भी होती है- वहां के पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, कीट-पतंगे, नदी आदि तमाम चीजें। यह विशेषता मेरे यात्रा वृत्तांतों को एक अलग पहचान देती है। जहाँ तक मेरी भावी योजना का सवाल है, तो मैंने हाल ही में अपने विज्ञान-नाटकों की पांडुलिपि पूरी की है। संस्मरणों और यात्रा-वृत्तांतों की पांडुलिपियों पर काम कर रहा हूं। बच्चों के लिए विज्ञान की बुनियादी जानकारी देने वाली एक पुस्तक जल्दी लिखूंगा। कुछ लंबी विज्ञान कथाएं या एक उपन्यास लिखने के लिए भी मन बेचैन रहता है। बच्चों और अन्य लोगों के बीच और अधिक जाना चाहता हूं ताकि उन्हें विज्ञान की नई रोचक बातें बता सकूं। और हां, विज्ञान

लेखन में रुचि रखने वाले नई पीढ़ी के किसी ऐसे एक या एक से अधिक साथियों को भी तलाश रहा हूं जो अपने जीवन में विज्ञान लेखक बनने का सपना देख रहे हैं। मैं उन्हें अपने अनुभव, अपने संघर्षों के बारे में बताना चाहता हूं ताकि उनका उत्साह बढ़ा सकूं। उन्हें यह भी बताना चाहता हूं कि हमारे समाज में वैज्ञानिक जागरूकता बढ़ाने और अंधविश्वासों से छुटकारा पाने के लिए हमारा विज्ञान लेखन कितना जरूरी है और यह भी किए यह हमारा सामाजिक उत्तरदायित्व है।

भारत के सन्दर्भ में विज्ञान संचार या लोकप्रियकरण की उपादेयता को आप कैसे व्याख्या करना चाहेंगे?

आज भी हमारे समाज में व्याप्त अंधविश्वासों और गलत रूढ़ियों के कारण विज्ञान संचार और विज्ञान लोकप्रियकरण अत्यंत आवश्यक है। देश के करोड़ों-करोड़ आमजन के बीच आज भी काल्पनिक भूत-प्रेतों और चुड़ैलों की आवाजाही जारी है। आए दिन तांत्रिक बड़ी संख्या में लोगों को ठग रहे हैं। आज भी डायन कह कर महिलाओं की हत्या की जा रही है। बेटियों को जन्म देने वाली महिलाओं को प्रताड़ित किया जा रहा है। गांव ही नहीं शहरों में भी पढ़े-लिखे लोग शकुन-अपशकुन और भविष्यवाणियों के भ्रम-जाल में फंसे हुए हैं। यह सब वैज्ञानिक जागरूकता से ही दूर हो सकता है। इसलिए विज्ञान संचार और विज्ञान लोकप्रियकरण को अधिक से अधिक बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

सरकारी स्तर पर विज्ञान संचार क्षेत्र में जो प्रयास किये गए और किए जा रहे हैं, उनका मूल्यांकन आप किस प्रकार करते हैं? इस विशिष्ट क्षेत्र में व्यक्तिगत और निजी संस्थाओं की पहल और उनके योगदान पर आपकी राय भी हम जानना चाहेंगे।

विश्व में भारत ही पहला देश है, जिसने वैज्ञानिक दृष्टिकोण को संविधान में शामिल करके इसे हर व्यक्ति के मौलिक अधिकार का दर्जा दिया। इसके बावजूद समाज में अंधविश्वास और कुरीतियां फैली हुई हैं। वैज्ञानिक जागरूकता बढ़ाने के लिए सरकारी स्तर पर लंबे अरसे से प्रयास किए जाते रहे हैं। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विभाग के तहत राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् (एनसीएसटीसी), विज्ञान प्रसार और राष्ट्रीय विज्ञान संचार एवं सूचना स्रोत संस्थान (निस्केयर) जैसी संस्थाओं ने वैज्ञानिक जागरूकता फैलाने का यथासंभव प्रयास किया है। फिर भी कुरीतियां और अंधविश्वास सर उठाए हुए हैं। मुझे लगता है, विज्ञान संचार के काम में जुटी इन संस्थाओं को अपने प्रयासों के मूल्यांकन के लिए स्वतः कम्यूनिकेशन ऑडिट कराना चाहिए ताकि उन्हें अपने लक्षित प्रयासों की प्रभावशीलता का पता लग सके। इससे उन्हें अपने कार्यक्रमों को और अधिक प्रभावी बनाने में मदद मिलेगी। निजी स्तर पर 'आइसेक्ट' और 'एकलव्य' जैसी संस्थाएं समर्पित रूप से काम कर रही हैं। विभिन्न प्रदेशों में भी कई संस्थाएं वैज्ञानिक चेतना फैलाने का काम कर रही हैं। मुझे लगता है कि सभी सरकारी, गैर सरकारी और निजी संस्थाओं को एक नेटवर्क में जुड़ कर वैज्ञानिक चेतना फैलाने के प्रयास करने चाहिए ताकि समाज में से अंधविश्वासों का अधिक से अधिक उन्मूलन किया जा सके और प्रयासों में दुहराव न हो।

विज्ञान लेखन और विज्ञान लोकप्रियकरण के बारे में इस चर्चा के लिए आपने समय दिया, इसके लिए आपको धन्यवाद।

आपका भी आभार, मनीष जी।

dmewari@yahoo.com
mmgore1981@gmail.com

अज्ञेय के शब्दों में -

पीपल की सूखी खाल स्निग्ध हो चली,
फिर इसने रेशम से बेड़ी बांध ली,
नीम के भी बौर में मिठास देख
हँस उठी है कचनार की कली,
टेसुओं की आरती सजा के
बन गई वधू वनस्थली।

वसंत आता है लेकिन कैसे आता है? पेड़-पौधों में बहार क्यों आ जाती है? अब तक सोये हुए पेड़-पौधे और लता कुंज सहसा फूलों से क्यों भर जाते हैं? वसंत के आगमन पर फूलों को खिने का संदेश कौन देता है? कौन उनमें चटख रंग भरता है? उनके रस-कलश कौन भर देता है?

फूलों के मर्म का पता लगाने वाले वैज्ञानिकों का कहना है कि बहार का संदेश हॉर्मोन रसायन देते हैं। ये एंटिजन कहलाते हैं। एंटिजन की मात्रा बढ़ने पर कलियां खिलने लगती हैं। इस रसायन का बनना दिनों की घट-बढ़ पर भी निर्भर करता है।

देवेन्द्र मेवाड़ी की किताब 'विज्ञान प्रसंग' से

विज्ञान कथा

भविष्य

देवेन्द्र मेवाड़ी

दिनांक 5 जनवरी, 2030 को दूरदर्शन के प्रातः कालीन समाचार बुलेटिन में यह मुख्य समाचार प्रसारित हुआ–

''इस वर्ष चिकित्सा विज्ञान का नोबेल पुरस्कार सुप्रसिद्ध भारतीय चिकित्सक डॉ. दिवस को प्रदान किया गया है। पैंसठ वर्षीय डॉ. दिवस नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाले पांचवें भारतीय हैं।

डॉ. दिवस को कैंसर के अचूक टीके की खोज के लिए इस पुरस्कार से सम्मानित किया गया है....''

अगले दिन स्टाकहोम की डेटलाइन के साथ सभी समाचार पत्रों में यह समाचार सुर्खियों में प्रकाशित हुआ। 'रायटर' तथा ए.एफ.पी. द्वारा प्रेषित समाचार के अनुसार : नोबेल पुरस्कार-समिति ने पुरस्कार की घोषणा करते हुए कहा कि जानलेवा रोगों के इस सबसे बड़े अविजित क्षेत्र में अद्वितीय सफलता और अचूक टीके की खोज से डॉ. दिवस ने मानवता की महान सेवा की है। इस शताब्दी की यह महानतम खोज है और इससे प्रति वर्ष विश्व के करोड़ों कैंसर रोगियों को जीवनदान मिल सकेगा। परीक्षणों के दौरान भारत में इस टीके से सैकड़ों रोगियों की जान बचाने में सफलता मिली है। पिछले शताब्दी इस रोग से संघर्ष में निकल गई थी और विरासत में यह रोग इस सदी को मिला। लेकिन अब डॉ. दिवस के टीके से इस प्राणलेवा रोग के क्रूर पंजों से मानवता को बचाने में सफलता मिल सकेगी। भारत में टीके का प्रयोग प्रारंभ हो चुका है और विश्व स्वास्थ्य संगठन ने इसे मान्यता दे दी है। इस टीके से कैंसरग्रस्त कोशिकाओं की वृद्धि तो रुकती ही है, उनमें उपस्थित दूषित पदार्थ भी नष्ट हो जाता है। इस कारण कैंसर की रसौलियों से रोगी कोशिकाएं न तो रोग फैला सकती हैं और न वे रसौली में ही रोगी बनी रह सकती हैं।

डॉ. दिवस ने कैंसर का कारण कोशिकाओं के न्यूक्लिइक अम्ल में विकार मानते हुए विषाणु टीके का आविष्कार किया तो स्वस्थ कोशिकाओं को किसी भी प्रकार की हानि पहुंचाए बिना सीधे कैंसर कोशिकाओं पर प्रभाव डालता है। टीके में उपस्थित विशिष्ट विषाणु शरीर में पहुंचते ही सीधे अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं। यह 'प्रोटीन' के खोल में भरा 'न्यक्लिइक अम्ल' कैंसर ग्रस्त कोशिकाओं में कारतूस से छूटे बारूद की तरह पहुंच जाता है। फिर यह रोगी कोशिकाओं के विकारग्रस्त 'न्यूक्लिइक अम्ल' के प्रभाव को नष्ट कर देता है, जिस कारण कैंसरग्रस्त कोशिकाएं सामान्य टूटी-फूटी कोशिकाओं की भांति शरीर में जज्ब हो जाती हैं। रक्त कैंसर अर्थात लिंफोब्लास्टिक ल्यूकेमिया में तो टीका लगने के तुरंत बाद श्वेत रक्त-कणिकाओं की संख्या घटने लगती हैं और कुछ सप्ताहों के भीतर ही सामान्य हो जाती है। इसके बाद अस्थि-मज्जा में सामान्य रूप से श्वेत रक्त कणिकाएं बनने लगती हैं...

डॉ. दिवस के पास विश्वभर से बधाई के तार, केबल और पत्रों का अटूट सिलसिला शुरू हो गया। कैंसर के रोगियों ने अपने पत्रों में उन्हें कोटिशः बधाइयां दीं और जीवनदान के लिए हार्दिक आभार व्यक्त किए।

उन्हीं दिनों की बात है यह।

एक दिन अपनी डाक के ढेर में उन्हें एक पत्र मिला, जिस पर संयुक्त राज्य अमेरिका की मुहर लगी थी। पत्र कैलिफोर्निया स्थित 'अंतर्राष्ट्रीय हिमीकरण संस्थान' के निदेशक द्वारा भेजा गया था। लिखा थाः

''प्रिय डॉ. दिवस,
कैंसर जैसे जानलेवा रोग के उपचार के लिए अचूक टीके की खोज करके आपने मानवता की महान सेवा की है। हमारे संस्थान की ओर से हार्दिक बधाई स्वीकार करें। एक ओर जहां आपने विश्व के करोड़ों जीवित कैंसर-रोगियों में जीवन की नई आशा का संचार किया है, वहीं पुनर्जीवन की आशा में द्रव नाइट्रोजन भरे क्रायोकैप्सूलों में पड़े हिमीकृत रोगियो के लिए भी एन जीवन की संभावना के द्वार खोल दिए हैं।''

भौतिक परिस्थितियों में परिवर्तन किए बिना भी व्यक्ति के स्वैच्छिक या कृत्रिम रूप से प्रेरित मानसिक नियंत्रण से सुसुप्तावस्था अथवा समाधि की स्थिति बनाई जा सकती है। इस स्थिति में हिमीकरण के विपरीत व्यक्ति की त्वचा और मस्तिष्क तो चेतन तथा अत्यधिक संवेदनशील रहते हैं, लेकिन उसकी ऑक्सीजन की आवश्यकता लगभग नगण्य हो जाती है।

इस पत्र के माध्यम से हमें आपको यह बताते हुए हर्ष हो रहा है कि हमारे इस संस्थान की स्थापना मानव को घातक जानलेवा रोगों से मुक्ति दिलाने के महान उद्देश्य से की गई थी, ताकि उन्हें समय आने पर रोग से मुक्ति करके नया जीवन दिया जा सके और जीवन के शेष वर्ष वे सुख के साथ जी सकें। संस्थान की स्थापना पिछली शताब्दी में सन 1984 में की गई थी और इसे विश्व के अधिकांश देशों से अनुदान मिलता रहा है। संस्थान में विश्व के सभी देशों के वैज्ञानिक अनुसंधान में सहयोग दे रहे हैं। आपको यह मालूम होगा कि इसी राज्य के प्रोफेसर जेम्स एच.बेडफोर्ड ने 1967 में कैंसर के कारण मौत के मुंह में जाने से पहले यह इच्छा व्यक्ति की थी कि मरने से पहले उनको हिमीकरण की विधि से जमा दिया जाए। बेडफोर्ड अपने इसी सपने के साथ सो गए कि कभी कैंसर का अचूक इलाज संभव हुआ तो शायद वे पुनः जिलाए जा सकेंगे। उन्होंने इस कार्य के लिए 42,200 डॉलर की धनराशि दी थी और दो लाख डॉलर की संपत्ति 'हिम-जैविक विज्ञान (क्रायोबायोलाजी) की सेवा के लिए दान कर दी थी। इस धनराशि से उनके नाम पर 'बेडफोर्ड फाउंडेशन फॉर क्रायोबायोलाजी' की स्थापना की गई। इस दिशा में लोगों की रुचि बढ़ती गई। दु:साध्य रोगों से लोगों को मुक्त करने के उददेश्य से अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के आधार पर 1984 में हमारे इस हिमीकरण संस्थान की स्थापना की गई। वर्ष-दर-वर्ष संस्थान में आधुनिकतम उपकरण और अन्य सुविधाएं जुटाई गईं और हमें गर्व है कि आज यह विश्व का सर्वोत्तम हिमीकरण संस्थान है।

संस्थान में हम विगत 46 वर्षों में 175 व्यक्तियों का हिमीकरण कर चुके हैं। इनमें से 110 व्यक्ति कैंसर तथा शेष अन्य जानलेवा लोगों से पीड़ित थे। आज वे सभी भविष्य में पुनर्जीवित होने की आशा के साथ संस्थान के क्रायोटोरियम में द्रव नाइट्रोजन के कैप्स्यूलों के भीतर सोए हुए हैं।

महोदय, अब वह शुभ दिन आ गया है जब हम क्रायो कैप्स्यूलों में पड़े कैंसर के रोगियों को 'जगा' कर पुनर्जीवन का महान प्रयोग प्रारंभ कर सकते हैं। जिस प्रकार परीक्षणों के दौरान हजारों कैंसर रोगियों को जीवनदान मिला, हमें विश्वास है, उसी तरह हमारे संस्थान में वर्षों से नवजीवन की आस में हिमीकृत कैंसर रोगियों के शरीर में भी प्राणों का संचार हो सकेगा। संस्थान के प्रबंध-मंडल ने आपकी खोज से आशान्वित होकर हिमीकृत कैंसर-रोगियों को 'जगाने' और आपके द्वारा आविष्कृत टीके से उनका उपचार करने का निर्णय लिया है। टीके का रक्त कैंसर अर्थात् लिंफोब्लास्टिक ल्यूकेमिया के रोगियों पर तुरंत असर होता है, इसलिए सबसे पहले प्रोफेसर आस्टिन को चुना गया है। वे विगत 45 वर्षों से क्रायोकैप्स्यूल में सोए हुए हैं। रक्त कैंसर के कारण अंतिम सांस लेने से पूर्व ही उनकी इच्छानुसार उनका शरीर द्रव नाइट्रोजन में सुरक्षित रख दिया गया था। प्रोफेसर आस्टिन को जिलाने के इस प्रथम प्रयोग के अवसर पर यह संस्थान आपको सादर आमंत्रित करता है। हमारी हार्दिक अभिलाषा है कि हिमीकरण से पुनर्जागरण के इस ऐतिहासिक प्रयोग के अवसर पर प्रो.आस्टिन के शरीर में कैंसर का टीका आपके ही कर कमलों से लगे और आपके ही हाथों उन्हें नई जिंदगी मिले।

डॉ. दिवस की स्वीकृति मिलने के बाद उक्त प्रयोग की तिथि 15 मई 2030 तय कर दी गई।

उस दिन 'अंतर्राष्ट्रीय हिमीकरण संस्थान' में प्रातः से ही भारी चहल-पहल शुरू हो गई थी। डॉ. दिवस अमेरिका आ गए थे। उनके अतिरिक्त विश्व के विभिन्न देशों के अनेक प्रख्यात चिकित्सक तथा हिम-जैविकीविद् भी वहां उपस्थित थे। इनमें डॉ. कुजिनोव, डॉ. मुकल मेहता और डॉ. बर्नाड जैसे वैज्ञानिक भी थे, जिन्होंने सुदूर मंगल ग्रह तथा उससे भी आगे की अंतरिक्ष यात्राओं के लिए मनुष्य के हिमीकरण की दिशा में महत्वपूर्ण खोजें की थीं।

डॉ. मुकुल मेहता ने चेतनावस्था में ही यौगिक क्रियाओं से समाधि की अवस्था प्राप्त करने की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया था। उन्होंने सिद्ध किया था कि भौतिक परिस्थितियों में परिवर्तन किए बिना भी व्यक्ति के स्वैच्छिक या कृत्रिम रूप से प्रेरित मानसिक नियंत्रण से सुसुप्तावस्था अथवा समाधि की स्थिति बनाई जा सकती है। इस स्थिति में हिमीकरण के विपरीत वयक्ति की त्वचा और मस्तिष्क तो चेतन तथा अत्यधिक संवेदनशील रहते हैं, लेकिन उसकी ऑक्सीजन की आवश्यकता लगभग नगण्य हो जाती है। शरीर की सभी क्रियाएं धीरे-धीरे रुक जाती है और व्यक्ति समाधि की अवस्था में पहुंच जाता है। इस विधि से लंबी अवधि तक समाधि की संभावनाओं पर वे आगे अनुसंधान कर रहे थे।

हिम-जैविकीविदों, चिकित्सकों और सम्मानित व्यक्तियों की

उपस्थिति में 15 मई को प्रायः छह बजे विश्वभर में अपनी तरह के पहले, अनूठे प्रयोग का शुभारंभ हुआ। प्रोफेसर आस्टिन का 'फ्लास्क' प्रयोगशाला में लाया गया और द्रव नाइट्रोजन से उनका शरीर बाहर निकालने से पूर्व संस्थान के महानिदेशक डॉ. नेल्सन ने अतिथि वैज्ञानिकों, चिकित्सकों और सभी उपस्थित सम्मानित सदस्यों का स्वागत करते हुए संस्थान के इतिहास, उद्देश्य और प्रगति पर प्रकाश डाला तथा इस बात पर हर्ष व्यक्त किया कि उनके हिमीकरण संस्थान में 175 व्यक्ति क्रायोकैप्स्यूलों उर्फ 'फ्लास्कों' में नए जीवन के मीठे सपनों के साथ सोए हुए हैं।

उन्होंने कहा, इन्हें पुनर्जीवन प्रदान करना तो महान वैज्ञानिकों और चिकित्सकों की खोजों पर निर्भर करता है, लेकिन उन खोजों का व्यावहारिक प्रयोग करके उन्हें 'जगाना' संस्थान का पुनीत कर्तव्य है। डन्होंने संस्थान में हिमीकृत रोगियों के संदर्भ में डॉ. दिवस की महान खोज का वर्णन किया और अंत में घोषणा की कि हिमीकृत प्रोफेसर आस्टिन को जगाने के लिए कैंसर का टीका स्वयं इसके आविष्कारक डॉ. दिवस लगाएंगे। इस घोषणा पर लोगों ने तालियां बजाकर हर्ष व्यक्त किया।

महानिदेशक डॉ. नेल्सन ने प्रोफेसर आस्टिन का परिचय देते हुए कहा कि उन्हें संस्थान में 18 जनवरी 1985 को क्रायोकैप्स्यूल में सुलाया गया था। तत्कालीन रिकॉर्ड के अनुसार प्रोफेसर आस्टिन रक्त कैंसर से पीड़ित थे और उनके जीने की कोई भी संभावना शेष नहीं रह गई थी। चिकित्सकों ने उन्हें ला-इलाज घोषित कर दिया था। ऐसी स्थिति में उन्होंने संस्थान से अपना हिमीकरण करने की प्रार्थना की। वे कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में साहित्य के प्राध्यापक थे। हिमीकरण के समय उनके 20 तथा 27 वर्ष के दो पुत्र तथा 22 वर्ष की एक पुत्री थी। पत्नी की उम्र तब 50 वर्ष थी।

डॉ. नेल्सन ने मुस्कुराते हुए बताया कि प्रो. आस्टिन को अपने पारिवारिक जनों के आखिरी चुंबनों की अब भी सुखद याद होगी। वे शांति के साथ सोए थे और अब 45 वर्ष बाद और भी अधिक शांति एवं सुख के साथ जागेंगे।

वहां उपस्थित बूढ़े लोगों को सारी कार्यवाई कुतूहलपूर्ण लग रही थी और वे भारी संदेह के साथ प्रयोग की प्रतीक्षा कर रहे थे। कई लोगों को लग रहा था जैसे पिरामिडों में पाई गई किसी 'ममी' को जिलाने के प्रयास किए जा रहे हों। स्टेनलेस स्टील के चमकते हुए थर्मसनुमा क्रायोकैप्स्यूल पर सभी की आंखें टिकी हुई थीं। विभिन्न देशों के पत्रकार वहां उपस्थित थे और विश्वभर में प्रयोग की हर कार्यवाई को उपग्रह संचार प्रणाली से प्रसारित करने के लिए टेलीविजन कैमरों की आंखें भी क्रायोकैप्स्यूल वैज्ञानिकों तथा उपकरणों पर टिकी थीं।

प्रयोग प्रातः ठीक 4 बजे प्रारंभ हुआ। चमकते क्रायोकैप्स्यूल को खोलकर प्रोफेसर आस्टिन का शरीर सावधानी पूर्वक, धीरे-धीरे बाहर निकाला गया। द्रव नाइट्रोजन में 45 वर्षों से पड़ा उनका शरीर हिमीकृत हो चुका था। धीरे-धीरे प्लास्टिक का खोल भी हटा दिया गया। उनके बाद पैर की फीमोरल धमनी से धीरे-धीरे शरीर में भरा हुआ ठंडा डाइमिथाइल सल्फाइड का घोल निकाल लिया गया। इसी रसायन के कारण उनके शरीर की कोशिकाएं सुरक्षित रही होंगी। इसके बाद धीरे-धीरे शरीर का तापमान बढ़ाया जाने लगा। साथ ही डाइमिथाइल सल्फाइड पूरी तरह निकाल लेने के बाद कलाइयों से उनके शरी में खून चढ़ाया जाने लगा।

संस्थान के प्रमुख हिम-जैविकीविद डॉ.असिमोव ने शीशे के उस पूर्णतः प्रतिरक्षित कमरे के भीतर तापमान नियंत्रण प्रणाली का एक बार पुनः परीक्षण किया। द्रव नाइट्रोजन में -196 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 45 वर्षों तक सोया प्रोफेसर आस्टिन का शरीर बढ़ते तापमान के साथ धीरे-धीरे ढीला होता जा रहा था। तापमान में अंश-दर-अंश वृद्धि होती जा रही थी। थर्मामीटरों में पारा ऊपर चढ़ रहा था।

कमरे में इतने लोगों की उपस्थिति के बावजूद खामोशी छोई हुई थी। लोगों को अपने हृदय की घड़कनें तक सुनाई दे रही थीं। कुतुहल और उत्सुकता में पल-पल बीतते समय का अहसास ही नहीं हो पा रहा था।

उधर घड़ी के बदलते अंकों के साथ तापमान शून्य तक पहुंच गया। प्रोफेसर का शरीर निस्पंद पड़ा था, जैसे कड़ाके की सर्दी में कोई मेंढक दम साधकर समाधिस्त पड़ा हो या चेरी की कोई कली शीत ऋतु में सोई हुई हो- 'वसंत की प्रतीक्षा में, जो बढ़ते तापमान के साथ-साथ वसंत में खिल उठेगी।'

प्रोफेसर आस्टिन के प्राणों को जगाने के लिए भी तो हिम-जैविकीविद एक नया वसंत लाने का प्रयास कर रहे थे- जब

द्रव नाइट्रोजन में -196 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 45 वर्षों तक सोया प्रोफेसर आस्टिन का शरीर बढ़ते तापमान के साथ धीरे-धीरे ढीला होता जा रहा था। तापमान में अंश-दर-अंश वृद्धि होती जा रही थी। थर्मामीटरों में पारा ऊपर चढ़ रहा था।

हिमीकृत शरीर में प्राण जाग उठेंगे और रोगमुक्त होकर उम्र की शाख पर खिल उठेंगे।

'अद्‌भुत! रोमांचक!' डॉ. असिमोव की आवाज खामोशी में गूंज उठी, 'पिछली 45 वर्षों की अवधि भी इतनी लंबी अनुभव नहीं हुई होगी, जितनी यहां प्रतीक्षा की ये घड़ियां अनुभव हो रही है। हर पल युगों लंबा महसूस हो रहा है। बेहद रोमांचक लग रहा है।'

'उठिए प्रोफेसर आस्टिन! सुबह हो गई है। अब उठिए भी!' डॉ. असिमोव ने कुछ ऐसी मुद्रा बनाकर अनुनय भरे स्वर में कहा कि कमरे में लोगों की हंसी बिखर गई। वातावरण में पारे की लकीर 25 डिग्री सेंटीग्रेड को छूकर आगे बढ़ गई। धीरे-धीरे तापमान 'मैस्कुलिन कंफर्ट जोन' में पहुंच गया।

डॉ.असिमोव ने प्रतिरक्षित कक्ष की पारदर्शी दीवार से भीतर की ओर जुड़े लंबे सफेद दस्तानों में हाथ डालकर कक्षा के भीतर यथास्थान रखी हुई सुई उठाई और उसमें रक्त को जमने से रोकने वाले तथा उत्तेजक रसायनों व शरीर की चैतन्य बनाने के लिए अन्य आवश्यक प्राणदायक दवाइयों की निर्धारित मात्रा प्रोफेसर आस्टिन के शरीर में प्रविष्ट करा दी। कक्ष में ऑक्सीजन की समुचित मात्रा निरंतर प्रवाहित हो रही थी। रोमांच के वे चरम क्षण थे और लोग दिल पर हाथ रखे प्रतीक्षा की घड़ियां गिन रहे थे....

सूर्य की किरणें फूट रही थीं, जब प्रोफेसर आस्टिमन के शरीर में गर्माहट आई और हल्की, बहुत हल्की कंपकंपी हुई। तभी डॉ. असिमोव चिल्लाए- 'हम सफल हो गए हैं! हे ईश्वर, हम सचमुच सफल हो गए हैं।'

तभी उपस्थित वैज्ञानिक, चिकित्सक तथा अन्य व्यक्ति खुशी से झूम उठे। लेकिन डॉ. असिमोव ने अपनी उत्तेजना पर नियंत्रण करते हुए कहा, 'कृपया शांत रहे, प्रोफेसर आस्टिन जाग रहे हैं। उनकी मांसपेशियों ने ऊर्जा का निर्माण शुरू कर दिया है। वे धीरे, बहुत धीरे सांस लेने लगे हैं। आप लोगों से प्रार्थन है, प्रयोग को सफलतापूर्वक आगे बढ़ने दें और आगे की कार्यवाई बाहर टेलीविजन पर देखें।'

इस अनुरोध के साथ ही भीतर बैठे सम्मानित व्यक्ति धीरे-धीरे बाहर चले गए। कक्ष के पास केवल डॉ. दिवस, डॉ. असिमोव, डॉ तथा दो नर्सें रह गई। हां, दस्तानों में हाथ डाले डॉ. दिवस टीके की सुई थामें तत्पर खड़े थे।

तभी कक्ष से जुड़े जटिल यंत्रों में से एक यंत्र की सुई हिली और डॉ. असिमोव खुशी से चीखे, 'शुरू हो गई। दिल की सामान्य धड़कनें भी शुरू हो गई हैं। शरीर का तापमान भी सामान्य हो गया है।'

उनके दिल की धड़कने, नाड़ी और सांस की गति लगभग सामान्य हो गई हैं। इसी समय प्रोफेसर ने जैसे दर्द से अपने हाथ-पैर हिलाए और उनके मुंह से हल्की 'आह' निकली! बस, यही क्षण था जब डॉ. दिवस ने अपने हाथों में पकड़ी कैंसर के टीके की सुई प्रोफेसर आस्टिन की बांह में चुभो दी।

डॉ. दिवस धीरे-धीरे जागते हुए प्रोफेसर आस्टिन के शरीर में हो रहे परिवर्तनों को देख रहे थे और टीके की सुई लगाने के लिए सही समय का इंतजार कर रहे थे। तभी तापमान सामान्य हो गया। प्रोफेसर के शरीर का तापमान 37 डिग्री सेल्सियस पर स्थित हो गया। उनके शरीर में जीवन का संचार हो गया था। वैज्ञानिक यंत्र बता रहे थे कि उनके दिल की धड़कने, नाड़ी और सांस की गति लगभग सामान्य हो गई हैं। इसी समय प्रोफेसर ने जैसे दर्द से अपने हाथ-पैर हिलाए और उनके मुंह से हल्की 'आह' निकली! बस, यही क्षण था जब डॉ. दिवस ने अपने हाथों में पकड़ी कैंसर के टीके की सुई प्रोफेसर आस्टिन की बांह में चुभो दी।

प्रोफेसर के मुंह से जैसे नींद में ही हल्की 'उफ' की आवाज आई और वे शांत पड़े रहे।

डॉ.असिमोव ने भी निर्धारित मात्रा में पोषक घोल तथा अन्य जीवनदायी रसायनों की सुइयां लगाई। दाएं हाथ की कलाई से बूंद-बूंद रक्त उनके शरीर में अब भी पहुंच रहा था। डॉ. नेल्सन ने तभी बहुत ही धीमे सवर में सुमधुर संगीत का स्विच ऑन कर दिया।

लगभग पांच घंटे बाद प्रोफेसर आस्टिन ने धीरे-धीरे अपनी पलकें खोलीं और बिना हिले-डुल कुतूहल से कक्ष को घूरने लगे। तभी उनकी आंखें प्रतिरक्षित कक्ष की पारदर्शी दीवार के पार टकटकी बांधे डॉ. दिवस, डॉ.नेल्सन व डॉ. असिमोव से टकराई।

वे कुछ पल देखते रहे, लेकिन उनकी आंखों में अपरिचय की परछाइयां डोल रही थीं। तीनों ने मुस्कुराकर सिर हिलाते हुए खामोशी से उनका अभिवादन किया। उत्तर में उनहें भी एक क्षीण मुस्कुराहट मिली, जिससे दोनों वैज्ञानिकों की आंखे सफलता की खुशी के आंसुओं से भर उठीं।

अगले दिन विश्वभर के समाचार पत्रों की सुर्खियों में 45 वर्षों बाद हिमीकरण से जिलाए गए प्रोफेसर आस्टिन और उइस प्रयोग को सफल बनाने वाले हिम जैविकीविदों तथा डॉ. दिवस के बारे में विस्तृत विवरण दिए गए। कई समाचार पत्रों ने तो इस घटना को 'बीसवीं सदी की ममी पुनर्जीवित' शीर्षक दिया और रंगीन चित्रों के साथ रोमांचक विवरण प्रकाशित किए।

कुछ और समाचार पत्रों ने इसे कैंसर से मानवता को मुक्ति दिलाने वाले डॉ. दिवस की सुई से मृत शरीर में प्राणों के संचार की

संज्ञा दी। पत्रकारों ने खोद-खोदकर इस अभूतपूर्व प्रयोग का रोमांचकारी विवरण धारावाहिक रूप से प्रकाशित करना प्रारंभ कर दिया। कई भारतीय समाचार पत्रों ने पौराणिक संदर्भ दे-देकर इस प्राचीन भारतीय विधि का नया रूप बताया।

प्रोफेसर आस्टिन 45 वर्षों की रिकार्ड अवधि में हिमीकरण से जागने वाले विश्व के प्रथम व्यक्ति घोषित कर दिए गए। कैंसररोधी टीका लगाने के बाद उनकी अत्यधिक सावधानीपूर्वक निगरानी की जा रही थी और चिकित्सक प्रतिरक्षित कक्ष के भीतर उनकी हालत का हर पल अध्ययन कर रहे थे। उनके शरीर की नियमित जांच से पता लग रहा था कि कैंसर धीरे-धीरे समाप्त हो रहा है। कैंसरग्रस्त कोशिकाएं प्रभावहीन हो रही थीं तथा उनके स्थान पर नई स्वस्थ कोशिकाओं का बनना शुरू हो चुका था।

> **वे पैंतालिस वर्षों बाद जाग रहे हैं ? उनकी पत्नी आज से बीस वर्ष पूर्व पचहत्तर वर्ष की आयु में गुजर गई थी– 2110 में। बड़ा लड़का 2115 में साठ वर्ष की आयु में दुर्घटना का शिकार हो गया और छोटी लड़की की 2021 में मृत्यु हो गई थी। दोनों लड़के जब तक जीवित रहे, पिता की संपत्ति के लिए अदालतों के दरवाजे खटखटाते रहे, लेकिन वसीयत के अनुसार अधिकांश संपत्ति प्रोफेसर आस्टिन के हिमीकरण और पुनर्जीवन के प्रयोग पर ही खर्च की जानी थी।**

दो माह लगे प्रोफेसर आस्टिन के चेहरे पर पीड़ारहित, सहज मुस्कान को उभरने में, जिसे देखकर हिम-जैविकीविदों और चिकित्सकों ने संतोष की सांस ली। लंबे तनाव से मुरझाए उनके चेहरे खिल उठे।

'अब कैसा अनुभव कर रहे हैं प्रोफेसर आस्टिन?' डॉ. असिमोव ने एक दिन पूछा।

'अचानक काफी आराम मिला है, डाक्टर! मैंने तो जीने की आस ही छोड़ दी थी, लेकिन आप लोगों ने बचा लिया। नई जिंदगी दी है आप लोगों ने .... कैसे धन्यवाद दूं ... हां, जरा बच्चों को बुला देंगे .... इंतजार करते-करते थक गए होंगे।' प्रोफेसर आस्टिन बुदबुदाए।

हिम-जैविकीविदों का माथा ठनका।

क्या कहना चाहते हैं प्रोफेसर आस्टिन? बच्चों को बुला देंगे जरा? जैसे यहीं कहीं इंतजार कर रहे हैं उनके बच्चे! क्या उन्हें पता नहीं है कि वे 45 वर्षों बाद जाग रहे हैं? उनकी पत्नी आज से 20 वर्ष पूर्व 75 वर्ष की आयु में गुजर गई थी– 2110 में। बड़ा लड़का 2115 में 60 वर्ष की आयु में दुर्घटना का शिकार हो गया और छोटी लड़की की 2021 में मृत्यु हो गई थी। दोनों लड़के जब तक जीवित रहे, पिता की संपत्ति के लिए अदालतों के दरवाजे खटखटाते रहे, लेकिन वसीयत के अनुसार अधिकांश संपत्ति प्रोफेसर आस्टिन के हिमीकरण और पुनर्जीवन के प्रयोग पर ही खर्च की जानी थी।

कहा जाता है, लड़की अध्ययन के दौरान किसी हिप्पी बन कर, भौतिक सुखों से ऊबकर पूर्व की ओर संभवतः भारत चली गई थी। उसके बारे में इससे अधिक कुछ मालूम न था।

डॉ.असिमोव ने सोचा अगर उसके बारे में पता लगाया भी जाए तो क्या लाभ? आज वह 67 वर्ष की वृद्धा होगी।

चिकित्सकों एवं हिम-जैविकीविदों को असमंजस में खड़ा देखकर प्रोफेसर आस्टिन ने धीरे-धीरे फिर कहा, 'कृपया, उन्हें बुला दीजिए। मैं बस इतना कह दूं उनसे कि अब मैं ठीक हूं, ताकि उनकी परेशानी दूर हो जाए। जब से उन्हें मेरी हिमीकरण की इच्छा का पता लगा है-तब से वे बहुत घबराए हुए हैं...'

वैज्ञानिकों के चेहरे पीले पड़ गए हैं। वही बात है, प्रोफेसर आस्टिन को 45 वर्ष के अंतराल का पता ही नहीं है। वे सोच रहे हैं, सामान्य एनेस्थीसिया के बाद होश में आए हैं। डॉ. नेल्सन ने सभी को बाहर निकलने का इशारा किया है और जोर से बोले – 'हां अब तो प्रोफेसर को उनके परिवारिक जनों से मिलने दिया जा सकता है। उन्हें इस खुशी में शामिल होने दीजिए। आइए, हम लोग बाहर चलें।'

सभी लोग बाहर निकल गए और चकित होकर एक-दूसरे का मुंह ताकने लगे। तुरंत आपात कालीन बैठक बुलाई गई। बैठक को संबोधित करते हुए डॉ. नेल्सन ने कहा 'आप लोगों में से भूलकर भी कोई प्रोफेसर आस्टिन को असलियत के बारे में न बताएं अन्यथा इस सदमें को वे झेल नहीं सकेंगे। उनका शरीर इस स्थिति में अभी नहीं है कि वे कोई भी शारीरिक अथवा मानसिक आधात सह सकें। एक छोटी-सी गलती भी हमारी इस महान, अभूतपूर्व सफलता को क्षण भर में मिट्टी में मिला सकती है और प्रोफेसर के जीवन को खतरे में डाल सकती है।'

गंभीरतापूर्वक विचार-विमर्श करने के बाद अंततः यही तय हुआ कि जब तक प्रोफेसर आस्टिन पूर्णतः स्वस्थ नहीं हो जाते और अतीत तथा वर्तमान की बदलती हुई परिस्थितियों को सहज रूप से सहने की आत्मशक्ति उनमें नहीं आ जाती, तब तक उन्हें भरमाना होगा।

डॉ. नैल्सन ने कहा- 'हो सकता है, इसके लिए आप लोगों को उन्हें 'मूड पिल्स' देनी पड़ें या एल.एस.डी. के कल्पनालोक में भरमाना पड़े, लेकिन ध्यान रखें, किसी भी हालत में उन्हें अभी वास्तविकता का पता न चले। उनकी स्मृति पूर्णतः सुरक्षित है और हिमीकरण की अवधि का अहसास न होने के कारण उन्होंने अपने घर-परिवार और समाज को लेकरन न जाने मन में कितना बड़ा और कैसा इंद्रजाल रचा हो। यह इंद्रजाल टूटने न पाए अन्यथा वे सत्य को शायद झेल नहीं पाएंगे।'

डॉ. नेल्सन ने अपने चेहरे पर से चिंता पोंछी और हिम-जैविकीविदों के साथ प्रफुल्ल मुद्र में भीतर प्रवेश किया। प्रोफेसर आस्टिन ने धीरे

से चेहरा मोड़ा और आशाभरी नजरों से उन्हें ताकते हुए बोले - 'क्या हुआ डॉक्टर? कहां है वे?'
'क्षमा कीजिए प्रोफेसर, नियमानुसार किसी नर्स ने उन्हें सायंकाल निर्धारित समय पर मिलने के लिए कहा दिया था। वे शायद कुछ देर में आएं। आते ही आपसे मिलेंगे। आपके स्वास्थ्य में हुए सुधार को देखकर उन्हें बहुत खुशी होगी। आप दवा लीजिए।' उन्होंने नन्हीं कणिका-सी गोली प्रोफेसर आस्टिन के मुख में गिरा दी।
थोड़ी देर बाद प्रोफेर कल्पनालोक में विचरण करने लगे। उनकी आंखों में शून्य में भटकता हुए देखकर डॉ. नेल्सन दबे पांव बाहर निकल आए.... उधर प्रोफेसर आस्टिन के लिए एक अभूतपूर्व अनुभव शुरू हो गया था। वे रंगों के रंगीन संसार में पहुंच चुके थे, जहां वे रंगों की मधुर आवाजें सुन सकते थे और कमरे में फूटते शब्दों व संगीत को अपनी आंखों से देख सकते थे। स्वयं को अपने ही शरीर के खोल में से बाहर बहकर एक नए सफर पर जाते हुए देख सकते थे- 'जहां समय की सीमा नहीं थी और स्वयं को, अपने परिवार और परिचितों को तथा अपनी दिमागी दुनिया को भूलकर कॉस्मिक अनुभूतियों के अद्‌भुत संसार में खो सकते थे। डॉ. अस्मिोव धीरे से कक्ष में आए और उन्हें खोया व डूबा हुआ देखकर वापस लौट गए। वे संतुष्ट थे कि कम-से-कम दस घंटे से पहले प्रोफेसर का सामान्य अवस्था में लौटना संभव नहीं है।'
उधर हिम-जैविकीविद बदलती परिस्थिति पर गंभीरता पूर्वक विचार कर रहे थे। पूर्णतः स्वस्थ होने तक प्रोफेसर को एल.एस.डी तथा 'मूड पिल्स' पर ही भरवाना था। वास्तविकता से उन्हें बहुत ही चतुरतापूर्वक धीरे-धीरे परिचित करना था। तब तक उन्हें पत्रकारों से भी दूर रखने का निश्चय किया गया, ताकि वास्तविकता के बारे में वे कोई प्रश्न पूछ सकें।
पांच माह बाद प्रोफेसर आस्टिन जब स्वस्थ होकर अंतर्राष्ट्रीय हिमजैविकी संस्थान से छूटने लायक हो गए तब एक और नई समस्या पैदा हो गई वे छूट कर जाएं कहां? अब वे 55 वर्षीय स्वस्थ पुरुष थे और भविष्य उनके सामने पड़ा था, जो उन्हें सामान्य जीवन जीते हुए बिताना था। अपनी अधिकांश संपत्ति वे 45 वर्ष पूर्व ही संस्थान को दान कर चुके थे और संस्थान ने उनके हिमीकरण में उसका पूरा उपयोग कर लिया था। अब भावी जीवन में कैसे जिएं?
संस्थान की ओर से महानिदेशक डॉ.नेल्सन ने एक गोपनीय पत्र कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय को लिखा कि क्या सेवा करते हुए गंभीर रोगग्रस्त हो जाने और फिर इलाज के बाद किसी कर्मचारी को वापस लिया जा सकता है? यदि हां, तो 45 वर्ष बाद साहित्य के प्रोफेसर आस्टिन को अपने पद पर पुनः सेवा प्रारंभ करने की अनुमति दी जा सकती है?
नियमानुसार यह संभव तो नहीं था, लेकिन विश्वविद्यालय ने अपने भूतपूर्व प्रोफेसर और आज की विश्वविख्यात विभूति प्रोफेसर आस्टिन को विशेष चिकित्सा अवकाश का लाभ देकर सेवा में वापस लेने का निश्चय किया।
अब स्वस्थ, प्रसन्न प्रोफेसर आस्टिन को सावधानीपूर्वक वास्तविकताओं से परिचित कराना था। यों अब तक अनेक बहाने बनाए जा चुके थे और उनके परिवार के बारे में न जाने कितनी तरह की बातें हिम-जैविकीविद उनसे कह चुके थे। लड़के जीवनभर अदालत में संपत्ति के लिए लड़ते रहे थे और पोते-पोतियों की उनमें कोई रुचि नहीं थी। सच्चाइयों का अहसास कराने के लिए 'मूड पिल्स' तथा एल.एस.डी. के कल्पना लोक से लौटने पर उन्हें अतीत से मिलती-जुलती घटनाओं वाली टेलीविजन फिल्में दिखाना शुरू कर दिया गया। उनके मस्तिष्क पर इन फिल्मों के प्रभाव का सतर्कतापूर्वक अध्ययन भी किया जा रहा था। शुरू में साधारण घटनाएं दिखाई गई जिनमें परिवारों के बिखरने की कहानियां थीं। फिर सयाने होते ही मां-बाप से बिल्कुल अलग रहकर मुक्त-स्वच्छंद जीवन जीने वाले युवक-युवतियों के जीवन भर पर आधारित फिल्में थीं। शुरू-शुरू में मां-बाप से मुंह मोड़कर मौज बनाने वाले युवकों और युवतियों की कहानियों से उनका दिल डूबने लगता, मस्तिष्क-तरंगें तनाव का संकेत देतीं, लेकिन धीरे-धीरे वे इन घटनाओं के अभ्यस्त हो गए।
उसके बाद दुर्घटनाएं दिखाई गई- प्राकृतिक भी और युद्ध व दंगों पर आधारित भी, जिनमें परिवारों के बिछड़ जाने या सगे-संबंधियों के मारे जाने संबंधी फिल्म शामिल की गई। कॉर्डियोग्राम, इलेक्ट्रोइनसिकेलोग्राम, रक्तदाब, सांस आदि शुरू में असामान्य होती, लेकिन धीरे-धीरे बदली हुई परिस्थितियों के प्रति सहज होते जा रहे थे और हिम-जैविकीविदों के लिए यह उत्साहजनक लक्षण था। वास्तविकता का आघात न सह पाने की स्थिति में उनके मस्तिष्क से अतीत की स्मृतियों को मिटा डालने के अलावा और कोई रास्ता शेष न रहता। वह स्थिति बहुत दुःखद होती क्योंकि अच्छी-बुरी पुरानी स्मृतियों के संसार के बदले उन्हें 55 वर्ष की इस उम्र में एक शिशु की तरह नया जीवन शुरू करना पड़ता। उम्र में वे आधी सदी पार कर चुके होते और अनुभवों का जन्म शुरू होता।
धीरे-धीरे वे दर्दनाक दृश्यों को भी आसानी से सहने लगे। वे कठोर हृदय बनने में समर्थ हो रहे थे और भावनओं पर नियंत्रण करने की काफी अच्छी क्षमता उनमें विकसित हो गई थी। उन्हें परिस्थितियों के अनुसार ढालने में हिम-जैविकीविदों और चिकित्सकों

पूर्णतः स्वस्थ होने तक प्रोफेसर को एल.एस.डी तथा 'मूड पिल्स' पर ही भरवाना था। वास्तविकता से उन्हें बहुत ही चतुरतापूर्वक धीरे-धीरे परिचित करना था। तब तक उन्हें पत्रकारों से भी दूर रखने का निश्चय किया गया, ताकि वास्तविकता के बारे में वे कोई प्रश्न पूछ सकें।

को काफी सफलता मिलती जा रही थी। उनकी मनःस्थिति और शारीरिक क्षमता के अनुसार सुरक्षित मात्रा में एल.एस.डी. व मूड पिल्स देकर भी स्थिति लगातार सुधारी जा रही थी। भविष्य-विज्ञान की फंतासियों पर आधारित फिल्में भी अब वे आराम से देख सकते थे और कई कथाचित्रों के अधेड़ नायकों की भांति वे भी दुख के थपेड़ों को झेलकर, अकेले अपने पैरों पर खड़े होकर कठिनाइयों से संघर्ष करते हुए आगे बढ़ने का साहस सहेज चुके थे। फिर धीरे-धीरे हलकी कानाफूसियों के रूप में अपने अतीत की कहानी भी उन्होंने सुनी, खोद-खोदकर असलियत का पता लगा और मूड पिल्स व एल.एस.डी. के मायावी संसार में उनको लेकर बह लिए।

परिस्थितियों के अनुसार ढालने में हिम-जैविकीविदों और चिकित्सकों को काफी सफलता मिलती जा रही थी। उनकी मनःस्थिति और शारीरिक क्षमता के अनुसार सुरक्षित मात्रा में एल.एस.डी. व मूड पिल्स देकर भी स्थिति लगातार सुधारी जा रही थी। भविष्य-विज्ञान की फंतासियों पर आधारित फिल्में भी अब वे आराम से देख सकते थे और कई कथाचित्रों के अधेड़ नायकों की भांति वे भी दुख के थपेड़ों को झेलकर, अकेले अपने पैरों पर खड़े होकर कठिनाइयों से संघर्ष करते हुए आगे बढ़ने का साहस सहेज चुके थे।

और एक दिन प्रोफेसर आस्टिन को हिमजैविकी संस्थान से छुट्टी मिल गई। जहां जाते, लोगों की भीड़ घेर लेती। लोगों के लिए वे एक अजूबा बनकर रह गए, जबकि उन्हें अपने चारों ओर की दुनिया अद्भुत, लेकिन अजनबी लगती। उनके चारों ओर अकल्पनीय चीजें थीं। विज्ञान और तकनीकी खोजों ने लोगों का रहन-सहन ही नहीं, व्यवहार भी बदल दिया था। उन्हें लगा, लोग खुदगर्ज हो गए हैं और अपने सुख के लिए कुछ भी कर गुजरने को तत्पर रहते हैं। साथी मनुष्यों के लिए उनके मन में जैसे कोई विशेष लगाव शेष नहीं रहा था।

अगले दिन प्रोफेसर आस्टिन कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय पहुंचे। वहां भी उन्हें विश्वविद्यालय भवन के अतिरिक्त सब कुछ बदला हुआ नजर आया। वे सूरतें, वे चेहरे जिन्हें वे जानते थे- कहीं नहीं थे। लोगों के बोलने और व्यवहार में अंतर आ गया था। बहरहाल, उन्होंने सेवा शुरू कर दी। आधुनिक साहित्य के अध्येता और चिंतक को जब प्राचीन साहित्य का अध्यापन कार्य सौंपा गया तब पहले वे रोष में भड़के, फिर चौंके और उसके बाद पाठ्यक्रम में कम्प्यूटरी कविताओं और मशीनी गद्यों-निबंधों को देखकर चुपचाप कार्य संभाल लिया। अब वे दिन भर भावनाओं एवं अनुभूतियों की नींव पर टिका प्राचीन साहित्य पढ़ाते और रातों को अतीत की यादों से लड़ते हुए चमत्कारी दवाओं के काल्पनिक लोक में खो जाते। वे अब इन दबावों के बुरी तरह आदी हो चुके थे और अब इनके बिना उनके लिए जीना संभवन नहीं था। परिवार की याद उन्हें बुरी तरह कचोटती और वे इससे बचने के लिए मादक दवाइयों या फिर नींद की गोलियों की शरण में चले जाते।

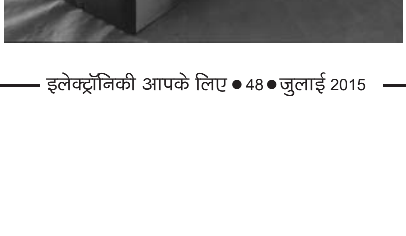

समाचार पत्रों और रेडियो-टेलीविजन पर एक बारगी बेहद चर्चित हो जाने के बाद इस प्रयोग के रोमांच का ज्वार अब काफी उतर चुका था। उन्हें देखने के लिए तमाशबीनों की भीड़ अब कम लगती थी। लेकिन अपने नए संसार में वे भीतर-भीतर बुरी तरह छटपटाने लगे थे।

कई बार उन्हें लगता कि उनका महत्व केवल एक 'ऐतिहासिक वस्तु' के बराबर है। वे एक 'एंटीक' हैं।

कभी लगता जैसे केवल दूसरों की उत्सुकता के लिए ही जी रहे हों। अपने लिए जीने का कोई विशेष अर्थ वे नहीं समझ पा रहे थे। सोचते, जिएं तो आखिर किसके लिए जिएं? न पारिवारिक सदस्य हैं, न संगी-साथी। कोई भी उन्हें आत्मीय आस्टिन के रूप में नहीं जानता। जो भी जानता हैं क्रायोकैप्स्यूल से साढ़े चार दशक बाद जागे हुए अद्भुत प्राणी के रूप में जानता है। वे जैसे आदमी की दुनिया में चिड़ियाघर का प्राणी होकर रह गए थे। उन्हें हर समय लगता जैसे उन्हें अतीत से पकड़कर एक नई अजनबी दुनिया में पटक दिया गया हो, जहां उनका अपना कोई नहीं है। अतीत रह-रहकर उनके मस्तिष्क में कौंधता। कभी पत्नी की तस्वीर सामने आती तो कभी बच्चे उछलते-कूदने लगते। पत्नी और दोनों पुत्रों की याद को तो उन्हें मृत मानकर मन-मस्तिष्क से क्षण भर पोंछ भी लेते, लेकिन बिटिया कैरोल किसी तरह न भूली जाती। सोचते, उसका क्या हुआ होगा? रह-रहकर कैरोल उनकी कल्पना में कूद पड़ती और वे सोचने लगते कि कैरोल क्या आज भी जीवित होगी? वे बस इतना ही तो जान सके थे उसके बारे में किसी सहपाठी के साथ भारत चली गई थी वह। क्या जिस तरह तमाम युवक-युवतियां नितांत स्वच्छंद जीवन जीने के लिए उनके समय में हिप्पी बनकर पूर्व की ओर निकल जाते थे- वैसे ही कैरोल भी भटकी होगी? ऐसे तमाम प्रश्नों के तनाव को झेलने के लिए वे फिर 'मूड पिल्स' की शरण में चले जाते।

इस बार सात माह बाद लौटी गंगा मां अपने एकांतवास से। अब वे अपना अधिकांश समय एकांतवास में ही व्यतीत करती हैं। अपने जीवन के पिछले 34 वर्ष दुःखी लोगों की सेवा में समर्पित करने के बाद अब विगत 4 वर्षों से वे बिल्कुल निर्जन एवं दुर्गम

क्षेत्र में स्थित अपनी 'शांति कुटीर' में एकांतवास करने लगी हैं। एकांत के क्षणों में कभी-कभी उनका अतीत उनकी आंखों के आगे जैसे साकार हो उठता है .....

आज से चौंतीस वर्ष पूर्व जब वे इस आश्रम में पहुंची थी, तो जीवन से पूरी तरह ऊब चुकी थीं। न जाने कौन-सी शक्ति उन्हें यहां हिमालय की पहाड़ियों तक खींच लाई थी। अपने जिस साथी के साथ भौतिक सुखों से ऊबकर आध्यात्मिक शांति और सुखी जीवन जीने की ललक लेकर वे मिस कैरोल के रूप में पहली बार भटकते-भटकते, कई देशों की खाक छानते गोवा तट पर पहुंची थीं, वह शीघ्र ही स्वच्छंदता प्रेमी नशेड़ियों-गंजेड़ियों के गिरोह में शामिल हो गया था। हिप्पियों का वह दल दर-दर भटकता, शहरों, तीर्थों की सैर करता रहा- कभी बनारस और कभी हरिद्वार। एल.एस.डी., चरस और हेरोइन के नशे में डूब कर शांति की खोज का वह ढोंग उन्हें उस दल से दूर करता चला गया। वे निपट एकाकी, भटकती-भटकती हरिद्वार तक पहुंचीथीं और हर तरफ से ऊबकर गंगा की गोद में समाने से पहले ही गौरी मां की बांहों ने उन्हें थाम लिया था। दुःखी और जिंदगी से थके-हारे लोगों की सेवा के लिए समर्पित मां गौरी से उनकी यह पहली भेंट थी। गौरी मां उन्हें अपने आश्रम में ले आईं हरिद्वार से बहुत दूर पिथौरागढ़ की इस पहाड़ी पर। आश्रम में दुःखी और बेसहारा महिलाओं को प्रशिक्षण दिया जाता था।

जीवन से बुरी तरह ऊबी और हारी हुई कैरोल ने अपने करुण कहानी गौरा मां को सुनाई थी। और, मां ने उसे गले लगा लिया था। धीरे-धीरे उन्हें पता चला कि गौरवर्णी गौरी मां भी कभी मानसिक शांति की टोह में सुदूर जर्मनी से यहां आकर बस गईं थी। इससे अधिक ने तो वे कुछ बताती थीं और न कोई जानता ही था। कहा करतीं- तपस्विनियों का भी भला कोई अतीत होता है। एक घर से आकर वे सारी वसुधा को ही अपना घर बना लेती हैं। इसीलिए युवा कैरोल से भी उन्होंने पिछली स्मृतियों को भुलाकर बिल्कुल नया जीवन प्रारंभ करने को कहा।

गंगा की भेंट मानकर उन्होंने कैरोल का नाम गंगा रख दिया। इस बार वह एंकांतवास से आश्रम में लौटीं तो वह समाचार सुनने को मिला, जिसने विश्वभर में तहलका मचा दिया था। पैतालिस वर्ष बाद पुनर्जीवित कर देने का वह सनसनीखेज समाचार।

आश्रम को शिष्याओं ने समाचार पत्र दिखाए तो प्रोफेसर आस्टिन की कहानी ने उनके भीतर भावनाओं का तूफान खड़ा कर दिया। वे अपने कक्ष में जाकर ध्यान में बैठ गई। विचारों की उथल-पुथल धीरे-धीरे शांत हो गई और वे संयत होकर इस बारे में गंभीरतापूर्वक सोचने लगीं। उनके भीतर कैरोल जीवित हो उठी। पिता के हिमीकरण की घटना उनकी स्मृति में साफ उभरने लगी। तब भला किसे विश्वास था कि यह सब संभव हो जाएगा। पिता के पुनर्जीवन के लिए उन्होंने ईश्वर को नमन किया और फिर इस चिंता में डूब गई कि उन्हें कैरोल के रूप में वापस लौटना चाहिए या नहीं?

यद्यपि अपने अतीत को पीछे छोड़ने के लिए उन्हें मन की कठिन साधना करनी पड़ी थी, लेकिन अब पिता के सामने उन्हें क्या कैरोल के रूप में नहीं जाना चाहिए? इन्हीं विचारों में खो गई गंगा मां।

सोचती रहीं वह कि पुनः जीवित होने पर कैसा लगा होगा उन्हें? उन्हें अपने घर-परिवार और साथियों की याद आई होगी? सहसा जी उठने पर उनके सामने उनकी दुनिया भी जी उठी होगी, लेकिन जब उन्हें पता लगा होगा कि उन्हें पहचानने वाला कोई भी नहीं है तो उनकी क्या दशा हुई होगी?

गंगा मां ने तो पिता को एक ऐसे व्यक्ति के रूप में देखा जो बिल्कुल असहाय है। जिसे उसका सब कुछ समाप्त हो जाने के बाद जगा दिया गया है। ऐसे व्यक्ति की मनोदशा का विचार करके गंगा मां सिहर उठीं। उन्होंने निश्चय किया कि वे पिता से मिलेंगी। उन्होंने कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के पते पर संदेश भेजने का संकल्प किया और ध्यान से उठ गई।

केबल पाने से जैसे प्रोफेसर आस्टिन को जीने का आधार मिल गया। पहले तो अविश्वास से शून्य में ताकते रह गए, लेकिन फिर खुशी से चीख उठे।

वे अब कैरोल की प्रतीक्षा करने लगे।

कुछ दिनों बाद कैरोल उर्फ मां पहुंच गई। उन्हें देखते ही प्रोफेसर चकित रह गए। उन्हें आघात लगा। कैरोल को सीने से लगा लेने को आतुर प्रोफेसर आस्टिन की बाहें जैसे निर्जीव होकर लटक गई। वे एकटक गंगा मां के झुर्रियों भरे शांत चेहरे को ताकते रह गए। सफेद साड़ी में उस श्वेतकेशी सड़सठ वर्षीय वृद्धा को कैरोल के लिए वे तैयार न हो सके। पुत्री को पा लेने का सारा उत्साह जैसे ठंडा हो गया। उम्र में अपने से बड़ी गंगा मां को गंगा मां ही स्वीकार करना उन्हें उचित होगा। अल्हड़ कैरोल कल्पना में ही कैद हो गई।

लेकिन गंगा मां को देखते-देखते एक अजीब शांति का अहसाह उन्हें जरूर हुआ। शुभ्र साड़ी और रुद्राक्ष की माला पहने गंगा मां उन्हें किसी देवी की तरह लग रही थीं। उनके चेहरे पर अपार शांति थी। उन्हें देखकर लग रहा था, जैसे उस पवित्र मूर्ति में कहीं कोई हलचल, कोई उद्विग्नता नहीं है। प्रोफेसर आसिटन को लगा- काश! उनके भीतर आलोड़ित होती जिज्ञासाएं और

जीवन से बुरी तरह ऊबी और हारी हुई कैरोल ने अपने करुण कहानी गौरा मां को सुनाई थी। और, मां ने उसे गले लगा लिया था। धीरे-धीरे उन्हें पता चला कि गौरवर्णी गौरी मां भी कभी मानसिक शांति की टोह में सुदूर जर्मनी से यहां आकर बस गईं थी। इससे अधिक ने तो वे कुछ बताती थीं और न कोई जानता ही था। कहा करतीं- तपस्विनियों का भी भला कोई अतीत होता है।

भावनाएं भी शांत जल की तरह स्थिर हो पातीं। गंगा मां की भांति वे भी शांति प्राप्त कर पाते।

'क्या सोच रहे आप?' गंगा मां ने मुस्कुराते हुए पूछा।

'सोच तो रहा था कैरोल के बारे में?' जब से मुझे केबल ग्राम मिला, मेरी कल्पना में केवल कैरोल ही उछल-कूद रही थी और मैं.... मैं कितने उत्साह से उसका इंतजार कर रहा था। मैं भूल गया था- और यह मेरी मजबूरी है कि मैं बार-बार भूल जाता हूं यह जो समय है वह मेरा नहीं है। मैं उसी कैरोल का सपना देख रहा था क्योंकि मैंने वैसा ही उसे देखा था। आपका देखकर, मैं आपके चेहरे में अपनी कैरोल का चेहरा नहीं खोज पा रहा हूं। नहीं, आप कैरोल नहीं हैं.... आप कौन हैं?

'हां, मैं कैरोल नहीं। सचमुच नहीं। में गंगा मां हूं। कैरोल तो आज से चौंतीस वर्ष पहले भारत की पवित्र नदी गंगा में समा गई थी और तब गंगा मां अर्थात् मैं अस्तित्व में आई। यों समझ लो, मेरा भी पुनर्जन्म हुआ है, लेकिन इस तरह कि अतीत, वर्तमान और भविष्य किसी भी समय-सीमा के साथ मेरा अस्तित्व नहीं बंधा है। विशाल ब्रह्मांड आज मेरा घर है और एक कैरोल के बजाय अब मैं संपूर्ण सृष्टि का एक अंश हूं। ब्रह्मांड की नियंत्रक शक्ति के सान्निध्य के लिए उसकी सृष्टि में ही खो जाना आवश्यक है। इसका एक सरल तरीका प्रकृति के निकट हो जाना है। इस लिए आज मैं प्रकृति के साथ हूं। जो आनंद और शांति भौतिक सुखों में कभी भी नहीं मिल सकती, वह दुःखी और पीड़ितों की सेवा में सहज ही मिल जाती है।.... मैं अब समझ रही हूं कि आपको इस स्थिति में सहारा न दिया गया तो आप न जाने क्या कर बैठें। जाने के लिए आप कोई आधार, पता कहीं खोज भी पाएं या नहीं। यही सब सोचकर मैंने निर्णय किया कि जिस तरह जीवन से पूरी तरह विश्वास उठ जाने के बाद मुझे जीवन में अटूट आस्था हो गई, उसी तरह आपको भी भौतिक संसार के सुखों से परे ले जाने की कोशिश करूं।'

'असल में सच पूछिए तो जहाँ ज्ञात ज्ञान खत्म होता है, वहां से अज्ञात ज्ञान शुरू होता है.... भौतिक से मानसिक संसार में प्रवेश प्रारंभ होता है। इसलिए आओ, इस भौतिक सुखों के संसार से निकलकर मेरे साथ चलो। ईश्वर तुम्हें सुख और शांति देगा....' कहते-कहते गंगा मां ने अपना हाथ पिता आस्टिन के सिर पर आशीर्वाद की मुद्रा में रख दिया। प्रोफेसर आस्टिन को लगा, अब उन्हें सचमुच जीना चाहिए।

dmewari@yahoo.com

('मेरी प्रिय विज्ञान कथाएं' से साभार)

आधुनिक युग का प्रथम विज्ञान गल्प मेरी डब्ल्यू.शेली (1797-1851) कृत 'फ्रैंकेंस्टाइन' (1818) है, अभी तक ऐसा ही अभिमत है। मेरी का जन्म ही एक साहित्यिक परिवार में हुआ था। 30 अगस्त, 1797 को लंदन में जन्मी मेरी के पिता विलियम गॉडविन कुशल संपादक और स्वतंत्र विवाह सिद्धांत के प्रचारक के रूप में खासे चर्चित थे तो उसकी मां पोलसटोन क्रैफ्ट 'द राइट्स ऑफ वीमेन' पुस्तक लिखकर ब्रिटिश समाज में प्रख्यात हो चुकी थी।

महाकवि शेली का गॉडविन परिवार में आना-जाना था, वहीं पर शेली ने मेरी को देखा और दोनों एक-दूसरे के मोहपाश में आबद्ध हो गए। अपनी पत्नी हैरियट से शेली का पूर्व ही संबंध विच्छेद हो चुका था। हैरियट के देहांत के उपरांत 30 दिसंबर, 1816 को शेली और मेरी परिणय सूत्र में बंध गए। 1822 में शेली नहीं रहे और मेरी के जीवन में महाशून्य परिव्याप्त हो गया, सो उसने नैराश्य से बचने के लिए शैली की कृतियों पर काम करना आरंभ कर दिया और उसने स्वयं भी कई कृतियां साहित्य जगत को भेंट की। साहित्यि संस्पर्श तो उसे शेली के साहचर्य के पूर्व बचपन में मिल चुके थे। जब उसने 'फ्रैंकेंस्टाइन' नामक अपना उपन्यास प्रस्तुत किया तो साहित्यनुरागियों ने इसमें नवीन परंपरा का उद्भास देखा। साहित्य और विज्ञान का अद्भुत समन्वयकारी यह उपन्यास मेरी की अद्भुत कृति है जिसे आधुनिक काल का प्रथम विज्ञान गल्प होने का भी श्रेय है। आगे चलकर इसी उपन्यास के नाम पर साहित्य में 'फ्रैकेंस्टाइन-ग्रंथि' नामक एक मुहावरा भी चल पड़ा जो मानवीय काम वासना और नारी व्यामोह के प्रतीक के रूप में प्रयुक्त है।

(शुकदेव प्रसाद द्वारा संपादित पुस्तक 'विश्वविज्ञान कथाएं' की भूमिका का अंश)

कॅरियर

आटोमोबाइल्स

संजय गोस्वामी

ऑटोमोबाइल इंजीनियर को आमतौर पर एक विशेष क्षेत्र (यांत्रिकी, इलेक्ट्रॉनिक्स) में विशेषज्ञ होते हैं। विशेषज्ञता का सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र इंजन निकास प्रणाली, इंजन और संरचनात्मक डिजाइन हैं। एक ऑटोमोबाइल इंजीनियर के लिए हमेशा ऑटो मोबाइल इंजीनियरिंग प्रक्रिया के सभी तीन पहलुओं पर काम करने की आवश्यकता है; अनुसंधान, डिजाइन और साथ ही परीक्षण। ऑटोमोबाइल इंजीनियरिंग में कारों, जीपों, बसों और प्रेरित इंजन प्रणाली के बारे में महत्वपूर्ण डिजाइन की निगरानी होती हैं, जो अन्य उपयोगकर्ताओं के लिए महत्वपूर्ण है इस कॅरियर मार्ग के लिए आवश्यक महत्वपूर्ण कौशल के रूप में व्यावसायिक समझ और यांत्रिकी, इलेक्ट्रॉनिक्स और गणित में रुचि होनी चाहिए। ऑटोमोबाइल इंजीनियर एक व्यवस्थित ढंग से काम करने में सक्षम हैं। ऑटोमोबाइल में कॅरियर उन लोगों के लिए है जिनमें धारा प्रवाह संचार कौशल के साथ ऑटोमोबाइल इंजीनियरिंग में उत्सुकता होना चाहिए। ऑटोमोबाइल जिम्मेदारियों का क्षेत्र है। उनका प्राथमिक उद्देश्य लागत कम रखने के लिए ऑटो मोबाइल की व्यवहार्यता और डिजाइन को अधिकतम करने के लिए महत्वपूर्ण डिजाइन है। इस क्षेत्र में एक व्यावसायिक ऑटोमोबाइल के लिए दोनों प्रणालियों इंजन (मशीन) और डिजाइन पर बहुत समय खर्च होता है। इंजन का डिजाइन शुरू में चित्र और ब्लूप्रिंट के रूप में किया जाता है। एक ऑटोमोबाइल इंजीनियर व्यवहारतः अंत उत्पाद में अपनी योजनाओं और अनुसंधान बदलने के लिए जिम्मेदार हैं। वे विस्तार करने के लिए सावधानीपूर्वक ध्यान के साथ-साथ निर्माण की पूरी प्रक्रिया की निगरानी भी करते है। कारों के अंत उत्पाद निर्मित करने के बाद, एक ऑटोमोबाइल इंजीनियर की नौकरी का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा शुरू होता है। इंजन परीक्षण की पूरी प्रक्रिया अत्यंत सावधानी से किया जाना चाहिए जो कार उपयोगकर्ताओं के लिए महत्वपूर्ण है। यह प्रक्रिया आमतौर पर यह एक सुरक्षित और सुरक्षित तरीके से हर हालत में कार्य करने में सक्षम होनी चाहिए। ऑटोमोबाइल इंजीनियर के लिए एक वाहन के हर घटक पर ध्यान केंद्रित होनी चाहिए, जो इस काम के लिए अक्सर एक वित्तीय पक्ष भी है। यह इस काम के कानूनी पहलुओं पर ध्यान देने के लिए भी महत्वपूर्ण है कि ऑटो मोबाइल इंजीनियर, सभी सुरक्षा नियमों के साथ निर्माण का काम होना चाहिए। ताकि ऑटोमोबाइल इंजीनियरिंग प्रक्रिया से संबंधित कानून का उल्लंघन नहीं हो।

आवश्यक योग्यता

ऑटोमोबाइल इंजीनियरिंग में इंजीनियरिंग की डिग्री (BE/BTec) प्राप्त करने से हासिल होती है। आमतौर पर विज्ञान (10+2, PCM) और हाईस्कूल में गणित का अध्ययन करने वाले लोग सीईटी/ आईआईटीजेईई में प्रवेश परीक्षा के आधार पर ऑटोमोबाइल इंजीनियरिंग कॉलेज में मेरिट लिस्ट के आधार पर प्रवेश होता है उन्हें इसके साथ ही, वाहनों के या ऑटोमोटिव इंजीनियरिंग के रूप में एक क्षेत्र में एक मास्टर की डिग्री भावी ऑटोमोबाइल इंजीनियरों एक विशिष्ट लाभ देता है। ऑटोमोबाइल में डिप्लोमा धारकों, डिग्री धारकों के समकक्ष होने के लिएAMIE परीक्षा दे सकते हैं।

ऑटोमोबाइल इंजीनियर की मांग

संयुक्त राज्य अमेरिका में, मिडवेस्ट क्षेत्र में ऑटोमोबाइल विनिर्माण कंपनियों में ऑटोमोबाइल इंजीनियर बनने के लिए सबसे अच्छी जगह है। यूरोप में जर्मनी अग्रणी वाहन निर्माता कंपनी है। ऑटोमोबाइल उद्योग दुनिया के अधिकांश क्षेत्रों में है, जो लोगों के कारों, स्कूटरों की अधिक संख्या की वजह से प्रशिक्षण और सफल बनने के लिए आवश्यक उच्च स्तर के ऑटोमोबाइल इंजीनियरिंग में विशेषज्ञता के संस्थान है। भारत में विशेष रूप महाराष्ट्र प्रांत सबसे अधिक रोजगार के साथ ही इस क्षेत्र में वेतन के उच्चतम स्तर प्रदान करता है। बंगलौर के शहर में भी भारत के भीतर एक ऑटोमोबाइल इंजीनियर बनने के लिए एक अच्छी जगह है। जापान, दक्षिण कोरिया, चीन और भारत में ऑटोमोबाइल इंजीनियरों के लिए एक बड़ी मांग है।

प्रमुख-संस्थान

- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली
- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर
- राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रायपुर
- भारतीय प्रौद्योगिकी इंस्टीट्यूट, चेन्नई
- जादवपुर इंजी. और प्रौ. संस्थान, जादवपुर विवि, कोलकाता
- असम इंजीनियरिंग कॉलेज, गुवाहाटी
- एस.वी. नेशनल कॉलेज, सूरत

goswamisanjay80@yahoo.in

विज्ञान समाचार

चीन चांद के अंधेरे वाले हिस्से पर उतारेगा एस्ट्रॉनट

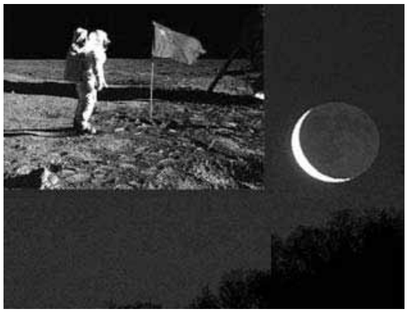

चाइनीज सेंट्रेल टेलीविजन के मुताबिक चीन अब चांद के उस हिस्से में अपने एस्ट्रॉनट उतारने जा रहा है जहां अंधेरा रहता है। चांद के अंधेरे वाले हिस्से में अपना अंतरिक्षयान उतारने वाला चीन दुनिया का पहला देश होगा। चीन के लूनर एक्सप्लोरेशन प्रोग्राम के चीफ इंजिनियर वू वैरेन ने इस बात का खुलासा किया है। उनके मुताबिक चीन चांग-4 प्रोजेक्ट पर काम कर रहा है जिसके तहत एस्ट्रॉनट्स को चांद के अंधेरे वाले हिस्से में उतारा जाएगा। वू ने कहा है कि चांद का अंधेरे वाला हिस्सा पृथ्वी से जितना घना अंधेरे वाला दिखता है वास्तव में वैसा नहीं है। उनके मुताबिक चांद का यह दूसरा हिस्सा पृथ्वीवासियों के लिए अभी भी रहस्य बना हुआ है जिस पर से जल्द ही पर्दा उठ जाएगा। गौरतलब है कि चांद के अंधेरे वाले हिस्से की पहली तस्वीर 1959 में ली गई थी। यह तस्वीर सोवियत रूस के लूना 3 उपग्रह ने ली थी। इसके बाद अपोलो 8 पहला ऐसा अंतरिक्षयान था जिसमें गए एस्ट्रॉनाट्स ने इसकी तस्वीरें ली थी।

दुनिया का सबसे छोटा ड्रोन

अब एक ऐसा ड्रोन आ चुका है जिसे आप घर के अंदर या बाहर कहीं भी अपने काम में ले सकते हैं। इस ड्रोन का साइज इतना छोटा है कि हाथ की हथेली में भी समा जाता है। इसके अलावा इसे जेब में रखकर कहीं भी लाया ले जाया जा सकता है। स्केयी नेनो ड्रोन नाम से आए इस ड्रोन को 34.99 *डालर की कीमत में उपलब्ध कराया गया है।* Skeye Nano Drone *हवा में उड़ाने वाला है ड्रोन है जिसका कुल वजन महज* 11.9 *ग्राम है। बहुत ही छोटी साइज होने के चलते यूजर इसे अपनी जेब में रखकर कहीं भी ले जा सकते हैं। स्केयी नेनो ड्रोन में* 100 *एमएएच की बैटरी लगी है जिसे एकबार पूरी तरह चार्ज होने में* 30 *मिनट का समय लगता है। एक बार पूरी तरह चार्ज होने पर यह ड्रोन लगातार* 7 *से* 8 *मिनट तक उड़ान भर सकता है।*

ई-सिगरेट भी पहुंचा सकती है फेफड़ों को नुकसान!

आजकल सिगरेट की लत छुड़ाने के लिए ई-सिगरेट का चलन आम हो चुका है, लेकिन यह भी आपके फेफड़ों को नुकसान पहुँचा सकती है। एक शोध रिपोर्ट के मुताबिक ई-सिगरेट में अलग-अलग फ्लेवर के लिए इस्तेमाल होने वाला पदार्थ भी आपके फेफड़ों की कार्यप्रणाली को नुकसान पहुंचा सकता है। इस अध्ययन में सामने आया है कि ई-सिगरेट में फ्लेवर पैदा करने के कई तरह के पदार्थ इस्तेमाल होते हैं जो फेफड़ों के अहम कोशिकीय कार्यप्रणाली में बदलाव कर सकते हैं। अध्ययनकर्ताओं ने अपने 13 फ्लेवर पर परीक्षण किया उनमें से 5 का फेफड़ों पर बुरा प्रभाव पाया गया। इस शोध की मुख्य लेखिका अमेरिका के नॉर्थ कैरोलीना विश्वविद्यालय की टेंपरेंस रोवेल का कहना है कि अनुसार, ई-सिगरेट से निकलने वाले धुएं में विभिन्न रासायनिक यौगिकों मौजूद होते हैं तथा इनसे फेफड़े पर पड़ने वाले प्रभाव से लोग अक्सर अनजान होते हैं। रोवेल का कहना है कि मानव फेफड़ों के एपीथीलियल उत्तकों पर किए गए अध्ययन में पाया गया कि 13 फ्लेवरो में से 5 फ्लेवरों के कारण बड़ी संख्या में उत्तकों की व्यावहारिकता और विषाक्तता पर बुरा प्रभाव पड़ा, हालांकि यह ई-सिगरेट लेने की मात्रा पर भी निर्भर करता है। इस अध्ययन में कृत्रिम मानव फेफड़ों के एपीथीलियल उत्तकों को ई-सिगरेट के 13 फ्लेवरों के संपर्क में 30 मिनट तक या 24 घंटों तक रखा गया।

कैंसर कोशिकाओं का पता लगाएगा 'माइक्रो रॉकेट'

भारत और जर्मनी के वैज्ञानिकों के एक समूह ने शरीर में बड़ी संख्या में मौजूद रक्त कोशिकाओं में ट्यूमर कोशिकाओं की पहचान कर पाने में सक्षम कार्बन नैनोट्यूब से माइक्रो रॉकेट बनाने का दावा किया है। पुणे के एक अनुसंधानकर्ता जयंत खंडारे ने कहा कि अरबों स्वस्थ रक्त कोशिकाओं में छिपी कुछ कैंसर उत्पन्न करने वाले कोशिकाओं को पकड़ना और कैंसर का पता लगाना चिकित्सकों के लिए मुश्किल कार्य है।

किताब! पेड़ बनकर उग आती है

भले ही सुनने में यह अजीब लगे कि किसी किताब को पढ़ने के बाद जमीन में गाड़ दें तो वो पेड़ बन कर उग सकती है, लेकिन यह सच है। वास्तव में अब एक ऐसी किताब आ चुकी है जिसें आप पढ़ने के बाद जमीन गाड़कर पानी देते रहते हैं तो वो पेड़ बनकर उग जाएगी। इस किताब को अर्जेंटीना की पेक्वेनो एडिटर नाम की पब्लिशिंग कंपनी ने जारी किया है। कंपनी ने इस किताब को बच्चों के लिए अपने ट्री बुक ट्री प्रोजेक्ट के तहत 'माय डेड वाज इन दी जंगल' नाम से जारी किया है। कंपनी का यह किताब जारी करने के पीछे का मकसद 8 से 12 साल तक बच्चों में प्रकृति के प्रति लगाव की भावना में बढ़ावा करना है। कंपनी ने इस किताब को एसिड फ्री पेपर, ईकोलॉजिकल स्याही तथा जेकारांडा के बीजों से बनाया है। जिसके चलते एकबार पढ़ने के बाद इसे जमीन में गाड़कर पानी देते रहने जेकारांडा के बीज अंकुरित होकर पेड़ के रूप में पनप जाते हैं।

पत्ते को बनाया चार्जर, हवा से चलाता है स्कूटी!

गाजियाबाद का पवन ऐसे कई कारनामे कर चुका है, जो लोगों को दांतों तले उंगली दबाने पर मजबूर कर दें। फिर चाहे वो पीपल के पत्ते से मोबाइल की बैटरी चार्ज करना हो या हवा से स्कूटी चलाना। इन सबके लिए पवन कुमार ना सिर्फ खासी सुर्खियां बटोर चुका है, बल्कि महान वैज्ञानिक और पूर्व राष्ट्रपति डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम के हाथों सम्मानित भी हो चुका है। महज आठवीं कक्षा के दौरान ही पवन पर कुछ अलग करने का जुनून सवार हुआ। वो इस्तेमाल के लायक न रहे हर घरेलू इलेक्ट्रॉनिक सामान में जोड़ तोड़ करता रहता। पिता पारस राम बताते हैं कि शुरू में उन्हें कुछ अजीब लगा था, लेकिन फिर धीरे-धीरे उसे वो प्रोत्साहित करने लगे। पारस राम कहते हैं कि पवन ने कई घरेलू इलेक्ट्रॉनिक सामानों पर प्रयोग किए। फेल भी होता रहा। घरवालों की डांट भी सुनी, लेकिन हार नहीं मानी।

इसी कोशिश में उसने सबसे पहले 2009 में पीपल के पत्तों से मोबाइल फोन की बैटरी चार्ज की। और जब कुछ और सोचा तो पीपल के पत्तों से पानी भी निकाला। जो पूरी तरह से शुद्ध और पीने लायक था। पवन ने कहा कि उसने किताब में सभी वस्तुओं के रिसाइकल फॉर्म से नई वस्तु प्राप्त करने के बारे में पढ़ा, तभी उसके दिमाग में आया कि अगर पत्तियां पूरे पेड़ के लिए खाना बनाती हैं, तो क्यों नहीं पत्तों से पानी भी वापस पाया जाए।

पवन जब नौवीं कक्षा में था, तभी आमिर खान की फिल्म 'थ्री ईडियट्स' रिलीज हुई। आमिर खान के रैंचो और फुंगसुकवांगडू के किरदार से प्रभावित होने के बाद पवन हद तक जुनूनी हो गया। इसी क्रम में प्रयोग करते हुए उसने एक दिन साइकिल से फोन चार्ज करने की देसी तरकीब खोज निकाली। जिसके लिए वो साइकिल के पहियों से उत्पन्न तरंगों को इलेक्ट्रॉन में बदलने में कोशिश की और सफल हुआ। इस कोशिश के तहत उसने साइकिल से ही इनवर्टर चार्ज किया, तो कई मोबाइल फोनों को एक साथ चार्ज करने में भी सफलता पाई। इस दौरान पवन ने टी-शर्ट पर सोलर पैनल लगाकर मोबाइल चार्ज किया, तो अपने सबसे महत्वाकांक्षी प्रोजेक्ट में जुट गया। पवन का ये प्रोजेक्ट था, हवा से स्कूटी चलाना। पवन इसमें भी सफल हुआ। चूंकि पवन ने साइकिल से इनवर्टर चार्ज करने की कला अपने दम पर हासिल कर ली थी, तो उसने यो-बाइक पर ये प्रयोग किया। पवन ने बताया कि यों बाइक में इस्तेमाल होने वाली 12 बोल्ट की बैटरी को चार्ज करने के लिए आगे पंखा लगा होता है। इस तरह से बाइक के चलते ही पंखा चलने लगता है, जिससे बैटरी चार्ज हो जाती है और उसी चार्ज बैटरी से यो बाइक को वो आराम से गाजियाबाद की सड़कों पर दौड़ाता है।

सेंसर कर देगा आगाह, खाना खराब हुआ है या नहीं

वैज्ञानिकों ने एक ऐसा सेंसर ईजाद किया है जो ये बताता है कि खाना खराब हो गया है या नहीं। इस सेंसर के संदेशों को बेतार संचार के माध्यम से मोबाइल फोन पर पढ़ा जा सकेगा। अनुसंधानकर्ताओं ने बताया कि यह सेंसर खाद्य सामग्री से एथेनॉल के उत्सर्जन को माप कर खाने के खराब होने की पहचान करेगा। सेंसर से मिली जानकारी ग्राहक या पाठक के पास पहुंचेगी और इससे संबद्ध डेटा एक सर्वर में सुरक्षित हो जाएगा। शोधार्थियों ने बताया कि इस एथेनहल सेंसर का विकास फिनलैंड के टेक्निकल रिसर्च सेंटर ने किया है।

तकनीकी समाचार

टच स्क्रीन वाले स्मार्ट कपड़े

गूगल अब ऐसे स्मार्ट कपड़े लेकर आई जो टचस्क्रीन की तरह काम करते हैं। इन कपड़ों के रेशों में सेंसर लगे हैं जिनके तहत इन्हें अन्य गैजेट्स से कनेक्ट कर उन्हें ऑपरेट किया जा सकता है। ये कपड़े टच सेंसटिव हैं तथा इस प्रोजेक्ट का नाम इस फेब्रिक को बनाने वाले फ्रेंच इन्वेंटर के नाम पर रखा गया है। स्मार्ट कपड़े बनाने वाले प्रोजेक्ट की टीम के सदस्य ऐमरे कारागोजलर का कहना है कि वो इंटरेक्टिव टैक्सटाइल बना रहे हैं। इन कपड़ों को कंडक्टिव धागों को बुन कर बनाया जा रहा है।

भारत को चाहिए 70 सुपर कम्प्यूटर

सरकार ने देश में 70 सुपर कम्प्यूटरों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए प्रयास शुरू कर दिए हैं। इससे सरकारी और निजी क्षेत्र की एजेंसियां विभिन्न क्षेत्रों में उच्च स्तरीय अनुसंधान कार्य कर सकेंगी। भारत में परम श्रेणी के सुपर कम्प्यूटर्स समेत इस समय 7 कंपनियों के लगभग 15 सुपर कम्प्यूटर्स है जो जरूरत के अनुसार कम है। सुपर कम्प्यूटर से भारत में मौसम, जलवायु, रक्षा और अन्य क्षेत्रों में अनुसंधान कार्य में मदद मिलेगी। ये कम्प्यूटर आधा पेटाफ्लॉप से 20 पेटाफ्लॉप तक की गति से कार्य करने में सक्षम होंगे, लेकिन समय और परियोजना के उच्चतम स्तर तक पहुंचने के साथ ही ये कम्प्यूटर 50 पेटाफ्लॉप तक की गति से काम कर सकेंगे। एक पेटाफ्लॉप की गणना कम्प्यूटर की प्रोसेसिंग स्पीड से की जाती है।

संभलकर बेचें अपना स्मार्टफोन, वरना जा सकते हैं जेल

यदि आप अपने पुराने स्मार्टफोन से ऊब गए हैं और नया मोबाइल खरीदने से पहले उसे बेचना चाहते हैं, तो आपके लिए एक चेतावनी है। दरअसल, पुराने फोन से भी आपके यूजर डेटा चोरी हो सकते हैं। एक टेक्नॉलॉजी वेबसाइट 'टेकवीकयूरोप डॉट को डॉट यूके' के अनुसार, कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं की ओर से किए गए हालिया अध्ययन में पाया गया है कि एंड्रॉयड पर चलने वाले पुराने फोन से उसके पुराने ओनर के डेटा हासिल किए जा सकते हैं। रिसर्चर्स ने बताया कि स्मार्टफोन को भले ही पूरी तरह डिस्क एनक्रिप्शन के जरिए सुरक्षित किया गया हो, इसके बावजूद ऐसे डेटा हासिल किए जा सकते हैं। एंड्रॉयड पर चलने वाले ज्यादातर स्मार्टफोन में यूजर डेटा, जिसमें एक्सेस टोकन, मैसेज, इमेज और अन्य सामग्री डिलीट करने का विकल्प सहज नहीं होता। तकनीकी विशेषज्ञ भी अब तक इसे लेकर चिंता जताते रहे हैं कि स्मार्टफोन से यूजर डेटा डिलीट करना बेहद कठिन होता है। अध्ययनकर्ताओं ने एंड्रॉयड पर चलने वाले पांच कंपनियों के 21 सैकंड-हैंड स्मार्टफोन का परीक्षण किया, जिनके तमाम डेटा फैक्टरी रीसेट सैटिंग ने डिलीट कर दिए गए थे।

सावधान! आपके पर्सनल डेटा लीक कर है ये ब्राउजर

चीन और भारत समेत दुनिया के कई देशों में पॉपुलर हो चुका यूसी ब्राउजर आपकी प्राइवेसी के लिए खतरा बन सकता है। कनाड़ा की एक तकनीकी रिसर्च फर्म ने इस बात का खुलासा किया है। इस रिसर्च फर्म सिटीजन लैब ने कहा है अलीबाबा द्वारा अधिग्रहीत UC Browser यूजर्स के फोन नंबर समेत अन्य कई तरह की जानिकारियां थर्ड पार्टियों को उपलब्ध करवा रहा है। सिटीजन लैब के मुताबिक यूसी ब्राउजर के यूजर से संबंधित प्राइवेसी प्रोटेक्शन सिस्टम में कमियां है। इन कमियों के चलते थर्ड पार्टियां बहुत ही आसानी यूजर्स के फोन नंबर, सर्च डिटेल, मोबाइल सब्सक्राइबर तथा डिवाइस नंबर आदि की जानकारी हासिल कर लेती है। सिटीजन लैब के अनुसार यूसी ब्राउजर के पूरी दुनिया में 500 मिलियन से भी ज्यादा रजिस्टर्ड यूजर है। इसके चलते यह दुनिया के प्रमुख वेब ब्राउजर्स में आता है। गौरतलब है कि यह ब्राउजर दुनिया में सबसे ज्यादा चीन और भारत में उपयोग में लिया जाता है। हालांकि अलीबाबा की ओर से कहा गया है इन कमियों को जल्द से जल्द ठीक किया जाएगा।

नये उत्पाद

पांच हजार से कम कीमत में लांच हुआ विंडोज टैबलेट

आईबॉल ने भारतीय फोन बाजार में अपना नया टैबलेट लांच किया है। इसकी कीमत पांच हजार से भी कम है। आईबॉल के अनुसार यह दुनिया का सबसे सस्ता विंडोज टैबलेट है। iBall Slide i701 नाम के इस टैबलेट में विंडोज 8.1 है। कंपनी के मुताबिक इस टैब में विंडोज 10 से भी अपग्रेड होगी। इस टैबलेट में 7 इंच का एचडी रिज्योल्यूशन आईपीएस डिस्प्ले है। इसमें क्वाड-कोर इंटेल एटम प्रोसेसर लगा हुआ है। 1जीबी की डीडीआर 3 रैम लगी हुई है। इंटरनल मेमोरी 16 जीबी है जिसे मेमोरी कार्ड की सहायता से 32 जीबी तक बढ़ाया जा सकता है। रियर कैमरा 2 मेगापिक्सल का है तो फ्रंट कैमरा 0.3 मेगापिक्सल का है। इस टैबलेट की कीमत 4,999 रुपए है। इस डिवाइस पर माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस का सब्सक्रिप्शन एक साल के लिए दिया जा रहा है। इसके साथ ही इस टैबलेट के यूजर्स माइक्रोसॉफ्ट वनड्राइव पर एक साल तक 1 जीबी तक डाटा सेव कर सकते हैं। इसमें 3200 एमएएच की बैटरी लगी हुई है। कनेक्टिविटी के लिए इसमें एचडीएमआई पोर्ट, यूएसबी और ओटीजी फंक्शन है। वाईफाई, ब्लूटूथ और 3G यूएसबी डोंगल भी इसमें है। इसमें ब्लूटूथ भी लगा हुआ है।

एकसाथ 200 लोगों से फ्री कॉल करने की सुविधा

वाले एक से बढ़कर एक एप आ चुके है, लेकिन अब एक ऐसा एप आया हैं जो अब तक आए सभी फ्री कॉल एप से शानदार सुविधा देता है। इस एप के जरिए आप लाइव चौट, कॉन्फ्रेंस और कॉल कर सकते हैं। यह नया एप Popcorn Buzz है तथा सबसे यूनिक है। इस एप की सबसे खास बात ये है कि इसके तहत आप एक ही वक्त में एकसाथ 200 लोगों के साथ बात कर सकते हैं।

सिर्फ 7 हजार में 25 हजार का फोन!

योटाफोन अपने फोन को 24,999 रुपए में लांच किया था, लेकिन अब यह स्मार्टफोन करीब 6,999 रुपए में मिल रहा है। इस स्मार्टफोन की सबसे बड़ी खासियत इसकी डिस्प्ले है। योटाफोन में दो डिस्प्ले की सुविधा हैं, एक आगे की तरफ और दूसरा पीछे की तरफ। यह पहली बार नहीं है जब योटाफोन की कीमत में कटौती की गई है। पहले इसकी कीमत 24,999 से घटाकर 17,999 रुपए, दूसरी बार 12,999 रुपए, तीसरी बार 8,999 और अब चौथी बार 6,999 रुपए की गई है। यह एक ड्यूल सिम फोन है। योटाफोन के फ्रंट में 4.3 इंच का डिस्प्ले है, जिस पर हाई रेजल्यूशन के साथ वीडियो देखे जा सकते है। इसके बैक पैनल पर 640x360 पिक्सल रिज्योल्यूशन वाला 4.3 इंच का इलेक्ट्रॉनिक पेपर डिस्प्ले दिया गया है। इस डिस्प्ले से बहुत सारे फीचर्स के काम किए जा सकते हैं। यह फोन 1.7 गीगाहट्र्ज डुअल-कोर प्रोसेसर, 2 जीबी रैम, 32 जीबी इंटरनल मैमोरी और एड्रॉयड 4.2.2 जैली बीन पर पर काम करता है। फोन में 1800 एमएएच की बैटरी लगी हुई है।

अगर कोई हवा से मोबाइल चार्ज करने की बात करे तो शायद आपको यकीन नहीं होगा। निकोना लैब ने एक ऐसा ही स्मार्टफोन केस बनाया है जो हवा से फोन को चार्ज करता है। इस केस को अभी आइफोन के लिए डिजाइन किया गया है। ये केस फोन में आने वाले सिग्नल को आरएफ हारवेसटिंग एंटीना की मदद से बिजली में बदल कर फोन को चार्ज करता है। निकोना लैब के मुताबिक 90 प्रतिशत एनर्जी फोन को वाई-फाई और ब्लूटूथ से कनेक्ट करने में चली जाती है। लैब की वेबसाइट के मुताबिक यह केस न सिर्फ फोन को प्रोटेक्ट करता है बल्कि सिग्नल की क्वालिटी बताने वाला इंडीकेटर, आरएफडीसी कनर्वटर, बैटरी लाइफ एक्टेंशन, आरएफ हारवेस्टिंग एंटीना जैसे फीचर भी उपलब्ध कराता है। अभी इस केस को बनाने के लिए किकस्टार्टर पर कैंपेन चल रहा है। इस केस के आने के बाद आपको मोबाइल चार्ज करने के लिए परेशान नहीं होना पड़ेगा।

आईसेक्ट समाचार

ब्रेनी बियर प्री-स्कूल व एक्टिविटी क्लब के समर कैम्प में अपने हूनर को तराश रहे बच्चे

ब्रेनी बियर इनोवेटिव प्री-स्कूल व एक्टिविटी क्लब भोपाल में 2 से 12 वर्ष तक के बच्चों के लिए समर कैम्प आयोजित किया जा रहा है जिसमें बड़ी संख्या में बच्चों को विभिन्न विधाओं में पारंगत किया जा रहा है। इस कैम्प में विभिन्न विषयों के विशेषज्ञ बच्चों के हुनर को तराश रहे हैं। ब्रेनी बियर स्कूल की सेंटर संचालक सुश्री श्वेता दुआ ने बताया कि यहां बच्चों को प्रतिदिन कई एक्टिविटी करवाई जा रही है। उन्हें खेल-खेल में आर्ट, क्राफ्ट्स और ज्वैलरी मैंकिंग की सिखाई जा रही है। साथ ही डांस, योगा, मैडिटेशन, गार्डनिंग, म्यूजिक का ज्ञान भी उनको दिया जा रहा है। गणित आधारित खेल के माध्यम से उनमें गणित के प्रति रूचि जगाने की एक्टिविटी भी करवाई जा रही है। साथ ही आज की जरूरत के हिसाब से, वॉक्यूबलरी, स्पीच, कैलिग्राफी, पर्सनालिटी डेवलपमेंट के लिए, पब्लिक स्पिकिंग, मैनर्स, एटिकेट, और को-आर्डिनेशन के लिए टीम आधारित एक्टिविटी पर जोर दिया जा रहा है। इस कैम्प में भाषा, कम्यूनिकेशन स्किल, इमेजिनेशन, रचनात्मकता सामाजिक व भावनात्मक स्किल के माध्यम से बच्चों के संपूर्ण विकास पर ध्यान दिया जा रहा है। सेंटर संचालक सुश्री दुआ ने बताया कि बच्चों को सेल्फ डिफेंस के लिए जुडो कराते की एक्टिविटी भी करवाई जा रही है। समर कैम्प प्रतिदिन सुबह 10 से दोपहर 12 बजे एवं शाम 4 से 6 बजे तक आयोजित हो रहा है।

प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना का शुभारंभ

देश की शिक्षा एवं प्रशिक्षण की अग्रणी संस्था एवं नेशनल स्किल डेवलपमेंट कार्पोरेशन (एनएसडीसी) की पार्टनर संस्थान के रूप में कार्यरत आईसेक्ट के मध्यप्रदेश के सभी जिलों, ब्लॉक एवं पंचायत स्तर के कौशल विकास केन्द्रों का वार्षिक सम्मेलन भोपाल में संपन्न हुआ। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में भोपाल के सांसद आलोक संजर उपस्थित थे। इस मौके पर सांसद आलोक संजर ने प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना का शुभारंभ किया। इस योजना के अंतर्गत विभिन्न सेक्टर्स में इंडस्ट्रीज से रिलेटेड व रोजगारोन्मुखी पाठ्यक्रमों का संचालन आईसेक्ट प्रदेश भर में करेगा। इसमें प्रमुख सेक्टर्स आईटी, रिटेल, बैकिंग, सिक्योरिटी, कंस्ट्रक्शन, इलेक्ट्रॉनिक्स, टेलीकॉम, टेक्सटाइल व एपरल, टूरिज्म इत्यादि होंगे। सफल छात्रों को रोजगार के अवसर व इंडस्ट्री रिकोग्नाइज्ड सर्टिफिकेट प्रदान किए जाएंगे। इस मौके पर सांसद श्री संजर ने उदाहरण के माध्यम से कौशल और प्रबंधन का महत्व बताया। उन्होंने कहा कि बिना समय गंवाए योजनाबद्ध तरीके से कार्य करना ही कौशल है। उन्होंने कहा कि हमें अपने आने वाले कल की चिंता करनी होगी और सहकार की भावना से कार्य करना होगा। इस मौके पर आईसेक्ट के महानिदेशक संतोष चौबे ने कहा कि हमारी अवधारणा शुरू से ही यह रही है कि हमने छोटे शहरों और गांवों में कार्य किया। हमने तकनीकी ज्ञान को हिन्दी और भारतीय भाषाओं में गांव-गांव तक पहुंचाया है। इस मौके पर सांसद श्री आलोक संजर के साथ आईसेक्ट के महानिदेशक संतोष चौबे, आईसेक्ट के निदेशक सिद्धार्थ चतुर्वेदी, आईसेक्ट की निदेशक पल्लवी राव चतुर्वेदी, आईसेक्ट नेटवर्क की रजिस्ट्रार पुष्पा असिवाल और आईसेक्ट विश्वविद्यालय के प्रो वाइस चांसलर अमिताभ सक्सेना मंचासीन थे। स्वागत भाषण में आईसेक्ट के निदेशक श्री सिद्धार्थ चतुर्वेदी ने आईसेक्ट की गत वर्ष की उपलब्धियों पर प्रकाश डाला। उन्होंने आईसेक्ट द्वारा किए जा रहे कार्यों की प्रेजेंन्टेशन के माध्यम से जानकारी दी। इस मौके पर आईसेक्ट द्वारा प्रकाशित रोजगार मेला न्यूज लैटर, कौशल विकास यात्रा रिपोर्ट व इलेक्ट्रानिकी आपके लिए के 250वें अंक का विमोचन भी किया। आईसेक्ट की निदेशक पल्लवी राव चतुर्वेदी ने प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना के बारे में विस्तृत जानकारी दी। इस मौके पर आईसेक्ट के श्रेष्ठ कार्य करने वाले केन्द्र प्रबंधकों को सम्मानित किया गया। आईसेक्ट ने यह भी बताया कि कई राष्ट्रीय मिशन जैसे प्रधानमंत्री जन-धन योजना, डिजिटल इंडिया मिशन, प्रधानमंत्री जीवन ज्योति व जन सुरक्षा बीमा योजना से जुड़कर आईसेक्ट निरंतर प्रगतिशील कार्य करेगा।

स्कोप समाचार

कैंपस कार्निवाल

स्कोप कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग में कैंपस कार्निवाल का आयोजन सफलतापूर्वक किया गया। इस कार्निवाल में 10 से अधिक कंपनियों ने भाग लिया। यह हाल ही में स्नातक की उपाधि प्राप्त किये हुए छात्र-छात्राओं के लिये था। इसमें भोपाल, रायसेन, सीहोर, होशंगाबाद, विदिशा के 500 से अधिक विद्यार्थियों ने रजिस्ट्रेशन कराया। युरेका फोर्ब्स, रिलांयस एच. आर. सर्विसेज, शिव-शक्ति ग्रुप, श्योंरविन, फर्स्ट सोर्स, आई. टी. एम. सेल्स एकेडमी आदि नामी कंपनियों ने इस कार्निवाल में भाग लिया। 162 विद्यार्थियों का चयन कंपनियों में विभिन्न पद जैसे सेल्स, आपरेशन्स, मार्केटिंग, ग्राहक सेवा आदि क्षेत्रों में हुआ। स्कोप कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग के ट्रैनिंग एंड प्लेसमेंट डायरेक्टर श्री उद्दीपन चटर्जी के अनुसार स्कोप कॉलेज में 30 से अधिक कंपनियों का कैंपस इस वर्ष आ चुका है और आने वाले महीनों में बड़े पैमाने पर कंपनियों के आने की योजना है। कॉलेज प्रबंधन ने सभी विद्यार्थियों के और उज्ज्वल भविष्य की कामना की है।

सांइस सेन्टर विजिट

स्कोप कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग के बीई व पॉलीटैक्नीक प्रथम वर्ष के छात्र-छात्राओं को भोपाल स्थित रिजनल सांईस सेंटर विजिट पर ले जाया गया। इस विजिट में विधार्थियों को भौतिकी, रसायन, ऊर्जा पर्यावरण के विभिन्न सिद्धांतो को प्रेक्टिकल रूप में देखने को मिला। न्यूटन थर्ड ला, पेंडुलम, अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत के उदाहरण विधार्थियों ने देखे। सभी विधार्थियों ने 3 डी फिल्म देखी। तारामण्डल में विधार्थियों ने तारों, सुपरनोवा के सम्बन्ध में जानकारियाँ प्राप्त कीं। फन साइंस सेंटर में विधार्थियों ने प्रेक्टिकल विज्ञान के सिद्धान्तों को मनोरंजन के साथ समझा। एटमोस्फीयर सांईस एग्जीवीशन भी छात्र-छात्रों ने विजिट की। स्कोप कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग समय-समय पर इंड्रस्टीयल विजिट कराता है जिससे विधार्थियों को लाभ होता है। इस विजिट में प्रो. आर. पी. गुप्ता, प्रो. अजय घोष, प्रो. पूर्णिमा अरोड़ा व बड़ी संख्या में विधार्थी शामिल थें।

इसरो विजिट

स्कोप कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग के ई.सी. फाइनल ईयर के विद्यार्थियों ने भोपाल स्थित इसरो की मास्टर कंट्रोल फैसीलिटी का भ्रमण किया। भोपाल स्थित इस केन्द्र से इसरो के जियो स्टेशनरी सेटेलाइट की मॉनीटरिंग व कंट्रोल होता हैं। विद्यार्थियों ने यहाँ बैंड फ्रिक्वेंसी सेक्शन, पॉवर स्टेशन सेक्शन, सैटेलाइट सेक्शन, कंट्रोलिंग सेक्शन, विजिट किये। विद्यार्थियों को यह जानकारी मिली कि किस तरह इनकोडिंग व डिकोडिंग होती हैं। अपलिंक, डाऊनलिंक, आवृति व कन्वरटर सैटेलाइट को समझा। राडार के कार्य व ट्रेकिंग के फंक्शन देखे। विद्यार्थियों के अनुसार यह विजिट उनके लिये लाभकारी रही। इस विजिट में प्रो. आर.पी.गुप्ता, प्रो. भारती चौरसिया, प्रो. अभिनय गुप्ता विद्यार्थियों के साथ रहे। इसरो के श्री हरीश व श्री राजेन्द्र ने सभी को गाईड किया। स्कोप कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग में समय-समय पर औद्योगिक भ्रमण कराया जाता हैं। जिससे विद्यार्थियों को प्रेक्टीकल नॉलेज भी मिलें।

आईसेक्ट यूनिवर्सिटी समाचार

आईसेक्ट विश्वविद्यालय के छात्रों ने की आकाशगंगा की सैर

आईसेक्ट विश्वविद्यालय में स्थापित सेंटर फॉर साइंस कम्युनिकेशन द्वारा आयोजित 'खगोलविज्ञान एवं आकाश गंगा की सैर' के माध्यम से विश्वविद्यालय के लगभग 100 छात्रों ने खगोलविज्ञान को करीब से जाना एवं रात्रि में दूरबीन के माध्यम से आकाश गंगा की सैर के दौरान शुक्र, बृहस्पति, शनि का अवलोकन कर रोमांचित हो गए। सेंटर फॉर साइंस कम्युनिकेशन के डायरेक्टर शम्भूरतन अवस्थी एवं विज्ञान प्रसार के क्षेत्र में कार्यरत अनिल धीमान व मुकेश सतंकर ने प्रेजेंटेशन व चलचित्र के माध्यम से छात्रों को सोलर सिस्टम के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला। आईसेक्ट विश्वविद्यालय के कुलपति वी के वर्मा छात्रों से इस अवसर पर रुबरु हुए एवं कहा कि भविष्य में भी वे इस कार्यक्रम को छात्रों के मध्य विशेष सत्र के रुप में लेकर आयेंगे ताकि छात्रों को खगोल विज्ञान व आकाश गंगा को जानने व समझने का अवसर प्राप्त होता रहे।

सामाजिक परोपकार के तहत प्रे फॉर ऑल प्रे फॉर नेपाल का आयोजन संपन्न

आईसेक्ट विश्वविद्यालय हमेशा की तरह इस बार भी नेपालवासियों की मदद के लिए 25 अप्रैल से ही सहायता के लिए विभिन्न प्रयास कर रहा है। विद्यार्थियों ने पूरे भोपाल में घूम-घूम कर मदद की राशि इकठ्ठा की इसी तारतम्य में सामाजिक परोपकार के तहत 'प्रे फॉर ऑल, प्रे फॉर नेपाल' द्वारा चैरिटी का आयोजन सी-21 मॉल में किया गया। इस चैरिटी आयोजन में ग्रुप डांस, सोलो डांस, पेंटिग एवं कोलाज में छात्रों ने अपना हुनर दिखाया। ग्रुप डांस में प्रथम रहीं भूमिका जौहरी एण्ड ग्रुप, कार्मल कान्वेंट स्कूल, द्वितीय स्थान पर निलेश सिंह एण्ड ग्रुप, डीआर डांस ग्रुप, सोलो डांस में प्रथम मयंक शाक्य, द्वितीय स्थान पर श्रुति राव, तृतिय स्थान पर अनुभव जैन, पेंटिंग में प्रथम आयुश झा, डीपीएस भोपाल, द्वितीय विभूति, तृतीय स्थान पर आशुतोष ओकदे एवं कोलाज में प्रथम स्थान पर कनिका सिंघल रहीं। जजेस पैनल में अरुण वर्मा, नीड डांस ग्रुप, मिस पूर्णिमा और रुफी खान ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। 'प्रे फॉर ऑल, प्रे फॉर नेपाल' चैरिटी कार्यक्रम में सभी ने बढचढ़ कर भाग लिया और नेपाल पीड़ितों के लिए हजारों हाथ आगे बढ़ कर आये। आईसेक्ट विश्वविद्यालय पिछले कुछ दिनों से अपने छात्रों के माध्यम से भोपाल शहर के विभिन्न स्थानों पर कई आयोजन कर रहा है और इसी दिशा में आगे आने वाले समय पर विभिन्न स्थानों पर और कई आयोजन करने के लिए प्रयासरत है, अतः आप सभी भोपालवासियों से अनुरोध है कि आने वाले दिनों में भी छात्रों के द्वारा किये जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों में बढ़चढ़ कर भाग लें जिससे नेपाल पीड़ितों को इस दुख की घड़ी में थोड़ा सा सहारा मिल सके। इस प्रयास से जितना भी धन तथा सामान इकठ्ठा होगा नेपाल भेजा जाएगा।

आईसेक्ट विश्वविद्यालय में मेगा ओपन कैंपस वीक का आयोजन

आईसेक्ट विश्वविद्यालय में ओपन कैंपस ड्राइव का आयोजन किया गया। इस ओपन कैंपस ड्राइव में दिल्ली की कैपिटल वाया कंपनी ने शिरकत की। यह कंपनी डेवलपमेंट, ऑनलाइन डिजिटल, ट्रेनिंग आदि क्षेत्र में सर्विस प्रोवाइड कराती है। इस कैंपस ड्राइव में 100 से अधिक स्टूडेंट्स ने भाग लिया। कंपनी प्रजेंटेशन के बाद ऑनलाइन टेस्ट आयोजित किया गया फिर ग्रुप डिस्कशन व अंत में टेक्निकल एचआर राउंड व पर्सनल इंटरव्यू हुए। कंपनी द्वारा अंततः 4 स्टूडेंट्स शॉर्टलिस्ट किए गए। आईसेक्ट विश्वविद्यालय के कुलपति श्री वी के वर्मा, प्रो-वाइस चांसलर श्री अमिताभ सक्सेना व कुलसचिव श्री विजय सिंह ने स्टूडेंट्स की इस सफलता पर बधाई दी।